मूल्य: ₹30

जुलाई–अगस्त 2022

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

www.icar.org.in

फलों को खाकर रहें स्वस्थ

अच्छी सेहत बनाए रखने के लिए फलों का सेवन करना बहुत आवश्यक है। फलों को सेहतमंद आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है। इनका स्नैक्स के तौर पर भी प्रयोग कर सकते हैं। सभी फलों में विटामिन, मिनरल्स, फाइबर और रोग से लड़ने के लिए जरूरी एंटीऑक्सीडेंट पाए जाते हैं। रोजाना फल खाने से कई सारी बीमारियां होने के आसार कम हो जाते हैं। कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स(जीआई) वाले फलों जैसे सेब और संतरे के सेवन से अब हृदय रोगी वजन को कम कर सकते हैं।

ग्लाइसेमिक इंडेक्स वसा को रैंक प्रदान करने की एक प्रणाली है, जो स्वास्थ्य को लाभ पहुंचाने के लिए आहार व्यवस्था की जांच करती है। इसमें कई तरह के कार्बोहाइड्रेट खाद्य पदार्थ होते हैं। ये आहार में ब्लड शुगर

लेवल को जरूरी स्तर पर जांचने में मदद करते हैं। कुछ खाद्य पदार्थों में जीआई वैल्यू अधिक होती है ,तो कुछ में यह कम होती है। उच्च जीआई वाले आहार से हृदय रोगों और टाइप-2 मधुमेह का खतरा बढ़ जाता है। ऐसे आहार, रक्त में शर्करा की मात्रा को तेजी से बढ़ाते हैं। व्हाइट ब्रेड, चावल, आलू तथा मिठाइयां आदि उच्च जीआई वाले आहार में शामिल हैं। कम जीआई वाले आहार जल्दी पचते हैं, जिससे शुगर का स्तर भी धीरे-धीरे घटता है।

ये बॉडी मास इंडेक्स (बीएमआई) को संतुलित रखने में भी मदद करते हैं। इनमें सेब, संतरे, ब्रोकोली, बीन्स तथा ब्राउन राइस व ओट्स आदि शामिल हैं।

वर्ष 2016-19 तक चले एक अध्ययन में 38-76 वर्ष के 160 रोगियों को शामिल किया गया। इसके एक समूह को सामान्य और दूसरे समूह को कम जीआई वाले आहार पर रखा गया। बाद में दोनों समूह के रोगियों की बीएमआई की जांच की गयी,तो कम जीआई आहार वाले समूह में अधिक सकारात्मक परिवर्तन पाए गए। ■

ऑर्किड की नई प्रजातियों का औषधीय महत्व

नैनीताल में मुख्य शहर से लगभग सात किलोमीटर की दूरी पर बेहद खूबसूरत बॉटनिकल गार्डन स्थित है। इस गार्डन में अनेक प्रकार के पौधे मौजूद हैं। इस गार्डन में एक ऑर्किड हाउस भी बनाया गया है, जहां ऑर्किड के आठ नए और बेहद खास पौधे लगाए गए हैं। वर्तमान में कुल मिलाकर यहाँ 35 प्रजातियों के ऑर्किड हो गए हैं, और खास बात यह है कि ये ऑर्किड पूरे नैनीताल में केवल यहीं देखने को मिलेंगे। नई प्रजातियों के ऑर्किड को पिथौरागढ़ के उच्च हिमालयी वन क्षेत्रों से लाया गया है।

नए ऑर्किड के फूल दो महीने से ज्यादा समय तक रहेंगे। इनमें कई औषधीय पौधों की प्रजातियां भी शामिल हैं। सिम्बीडियम, अलोईफोलियम, डेंड्रोबियम, लासियोपेटेलम, इरिया, लेसीओपिटेला, सेलोगाइन, लूसीया जंगली प्रजातियों के ऑर्किड यहां पर लगाये गये हैं। इन पर बैंगनी,हल्के पीले और सफेद रंग के फूल आते हैं। इस बॉटनिकल गार्डन में ऐसी प्रजाति के ऑर्किड को भी लगाया गया है, जिनके फूलों का इस्तेमाल टूटी हड्डी जोड़ने में किया जाता है।

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष: 43, अंक: 4, जुलाई-अगस्त 2022

संपादन सलाहकार समिति

1. **डॉ. आनंद कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उपमहानिदेशक (बागवानी)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
2. **डॉ. सुरेश कुमार मल्होत्रा** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
3. **डॉ. नीलिमा गर्ग** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ
4. **डॉ. डी के समादिया** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, राजस्थान
5. **डॉ. एस एस सिंधू** — **सदस्य**
   विभागाध्यक्ष
   पुष्प विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-भाकृअनुसं, नई दिल्ली
6. **प्रो. राजेश्वर सिंह चंदेल** — **सदस्य**
   कुलपति
   डॉ. वाई एस परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौनी, हिमाचल प्रदेश
7. **श्री शरद पांडे** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री कंवल सिंह चौहान** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
9. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिंदी संपादकीय एकक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन
मुख्य तकनीकी अधिकारी/उत्पादन
कुलभूषण गुप्ता

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
जे.पी. उपाध्ये

दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00

E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय सूची

फल विशेषांक

संपादकीय — विदेशी फल-सब्जियों की बढ़ती मांग—**अशोक सिंह**

तौर-तरीके
कीवी फल की देखरेख — 4
सनी शर्मा, विशाल सिंह राणा और नीरजा सिंह राणा

उन्नत तकनीक
कैसे लें अनार की बम्पर फसल — 6
दुर्गाशंकर मीना, मूलाराम **और** हरि सिंह मीना

तकनीक
ड्रैगन फ्रूट का लें भरपूर उत्पादन — 8
खुर्शीद आलम, मनोज कुमार सिंह, मुजीव अहमद **और** मो. वामिक

कुछ नया
स्ट्रॉबेरी की खेती को बनाएं व्यावसायिक उद्यम — 10
विशम्भर दयाल, कर्म बीर, रवि एस. सी **और** आलोक कुमार गुप्ता

महत्व
अनार एक, लाभ अनेक — 12
कनुप्रिया

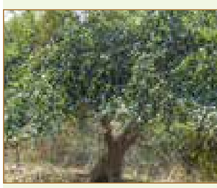

विधि
बेर में कलिकायन तकनीक से अधिक फल — 13
मोती लाल मीणा, इप्सिता बिश्वास, निधि कुमारी **और** पुष्पा सिंह

रणनीति
लीची स्टिंक बग की समस्या — 16
विनोद कुमार, जयपाल सिंह चौधरी **और** शेषधर पाण्डेय

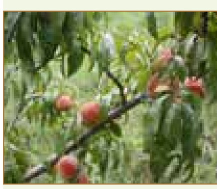

प्रबंधन
आड़ू की बागवानी — 18
जितेन्द्र कुमार, के.के. प्रमाणिक, अ.कु. शुक्ला, संतोष वाटपड़े **और** बलदेव सिंह

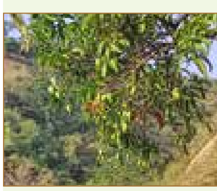

पोषण महत्व
आम की बहुपयोगिता पर ऐप्स — 20
नीलिमा गर्ग

लाभकारी
करौंदा की बढ़ती मांग — 22
सन्नी शर्मा, विशाल सिंह राणा, नीरजा राणा, विजय कुमार **और** उमेश शर्मा

फल विशेषांक

विषय सूची

उपयोगिता
गार्सिनिया है पोषक फल 24
प्रकाश चंद्र त्रिपाठी

कुछ अलग
परिनगरीय क्षेत्रों हेतु उपयुक्त फल 27
राम रोशन शर्मा

उपचार
चमत्कारी फल है सी-बकथॉर्न 30
कुलदीप कुमार शुक्ला, सम्पूर्णा नन्द सिंह, लवकुश पाण्डेय, जितेन्द्र कुमार शुक्ला **और** कुलदीप

लाल सोना
सेब में वूली एप्पल एफिड का प्रबंधन 32
सुमित वशिष्ठ, उपेन्द्र शर्मा **और** सुधीर वर्मा

तकनीक
बढ़ाएं संतरे की उपज 34
दुर्गाशंकर मीणा, मूलाराम, जयराज सिंह गौड़ **और** मुकुट बिहारी

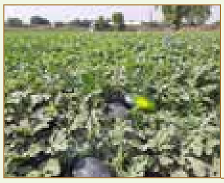

विधि
तरबूज को बनाएं आय का स्रोत 37
बी.एल. आसीवाल, सुनिल मीणा **और** रमेश चन्द्र आसीवाल

कमाई
पपीते की अंतर फसली खेती बढाए उपज 40
स्वाति साहा **और** जी. के. माहापात्रो

रसीला
अंगूर की उन्नत बागवानी 43
अनुराग पटेल, अभिजीत खाडत्कर **और** सी पी सावंत

सफलता गाथा
आम की खेती से समृद्धि 45
लोगानन्दन एन., जगदीश के.एन., प्रशांत जे.एम., पी.आर. रमेश **और** सोमशेखर

जानकारी
वर्षा की फुहार, बागों में लाई बहार 47
हरे कृष्ण, अरविंद कुमार सिंह **और** रामकेश मीणा

संपादकीय

फल विशेषांक

विदेशी फल-सब्जियों की बढ़ती मांग

यह सर्वविदित तथ्य है कि वैश्विक स्तर पर भारत, फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसके बावजूद हाल के वर्षों में भारतीय बाजारों में विदेशी फलों एवं सब्जियों की आवक तेजी से बढ़ी है। इनमें से अधिकांश उत्पादों का कुछ वर्षों पहले तक पूर्ण रूप से आयात किया जाता था। अब ऐसे कृषि उत्पादों का कुछ उत्साही प्रगतिशील किसानों द्वारा उत्पादन किया जा रहा है। इनमें प्रमुख रूप से विदेशी मशरूम, टैंगी कीवी, हरे जैतून, ताजी ब्रोकली, ड्रैगन फ्रूट और कई अन्य उत्पादों का उल्लेख किया जा सकता है। इनमें से कई सब्जियां शहरी आबादी और होटलों में भी काफी लोकप्रियता हासिल कर रही हैं।

वर्ष 2018 में, भारत ने लगभग 3 बिलियन अमरीकी डॉलर मूल्य के फलों और सब्जियों का आयात किया, जबकि 2019 में यह आंकड़ा गिरकर लगभग 1.2 बिलियन डॉलर हो गया। इस आयात में कमी के पीछे मुख्य कारण था विदेशी बागवानी फसलों का बढ़ता घरेलू उत्पादन। यह प्रतिवर्ष 14-16 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। भारत सरकार ने, इस छोटे लेकिन महत्वपूर्ण क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय किसानों को विदेशी सब्जियों एवं फलों के बीज और पौधे उपलब्ध करवाने की नीति पर बड़े पैमाने पर अनुसरण करना शुरू किया है। वर्तमान में बड़ी मात्रा में आयात किए जाने फलों में जापान के फूजी सेब के अलावा अन्य प्रकार के हरे सेब, लाल अंगूर, खजूर, जामुन, कीवी फल, विभिन्न प्रकार के मैंडरिन संतरे, पोमेलो सहित कई अन्य प्रकार के खट्टे फल शामिल हैं। भारत में जलवायु विविधता के कारण कई प्रकार की विदेशी फल किस्मों को बड़ी आसानी से उगाना संभव है। इसी कारणवश देश के किसानों द्वारा लाल अंबरी सेब के अलावा जम्मू और कश्मीर से प्राप्त फूजी की एक किस्म की खेती की जाती है। यह संकर किस्म हिमाचल प्रदेश अंबरी किस्म के स्वादिष्ट लाल सेब के साथ क्रॉस-ब्रीडिंग का परिणाम है। यह पूरे साल फल देने वाली किस्म है और इसका उपयोग जैम, जेली और मिठाई बनाने के लिए किया जाता है। इसी प्रकार तमिलनाडु में नीलगिरी जिला बेहतरीन गुणवत्ता के लेट्यूस का उत्पादन करता है, जबकि ताजा उगाए गए एवोकैडो हिमाचल प्रदेश में पाए जा सकते हैं। भारत में कीवी का सर्वाधिक उत्पादन हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर, सिक्किम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश और केरल में होता है। इसी तरह से बेरी का उत्पादन भी बढ़ रहा है। स्ट्रॉबेरी के बागान नैनीताल, देहरादून और महाबलेश्वर की हरी-भरी पहाड़ियों में फल-फूलते देखे जा सकते हैं। यही नहीं देश के कई हिस्सों में एक्वापोनिक सिस्टम में विदेशी सलाद एवं साग उगाए जा रहे हैं।

भारत में ड्रैगन फ्रूट 1990 के दौरान पेश किया गया था और बड़े पैमाने पर किसान इसकी ओर आकर्षित हुए थे, क्योंकि यह लाभदायक लग रहा था और इसे उगाने के लिए कम लागत की आवश्यकता थी। हाल के समय में महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, तेलंगाना, तमिलनाडु, ओडिशा, गुजरात और अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह सहित कई पूर्वोत्तर राज्यों में ड्रैगन फ्रूट की खेती बढ़ी है। यह फल अपने उच्च पोषण मूल्य के कारण शहरी क्षेत्रों में बहुत लोकप्रिय है।

अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों से ब्रोकोली, आइसबर्ग लेट्यूस, रंगीन शिमला मिर्च, शतावरी, अजवाइन, अजमोद, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, तोरी और गोभी सहित सब्जियों की एक बड़ी श्रृंखला का आयात भारत द्वारा किया जाता है। विभिन्न सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों ने किसानों को इन फसलों को उगाने के लिए प्रेरित किया है और प्रोत्साहन योजनाएँ शुरू की हैं। इसी का परिणाम है कि हरियाणा, महाराष्ट्र और कर्नाटक में किसानों द्वारा विदेशी साग का उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जा रहा है।

ये फल पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। यह भी कारण है कि उपभोक्ताओं द्वारा इन्हें काफी पसंद किया जाने लगा है। उदाहरण के लिए, एवोकाडो विटामिन सी, ई, के, और विटामिन $बी_6$ का एक उत्कृष्ट स्रोत है। इसी तरह कीवी विटामिन सी, के, ई, पोटेशियम तथा फोलेट फल विटामिन ई से भरपूर होते हैं। एंटीऑक्सिडेंट और फाइबर के अलावा, ये दोनों विदेशी फल विटामिन सी के भी अच्छे स्रोत हैं।

हमारे देश के बागवानों को परंपरागत फलों और सब्जियों की खेती के साथ जलवायु एवं मृदा की प्रकृति के अनुसार विदेशी बागवानी फसलों की ओर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। निस्संदेह यह सोच उन्हें अच्छी आमदनी पाने में मददगार सिद्ध होगी।

प्रस्तुत अंक आपकी अपनी पत्रिका **'फल फूल'** के **'फल विशेषांक'** के तौर पर प्रकाशित किया जा रहा है तथा इसमें विभिन्न फलों की वैज्ञानिक खेती की जानकारियों को संकलन के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

(अशोक सिंह)

कीवी फल की देखरेख

सनी शर्मा*, **विशाल सिंह राणा*** और **नीरजा सिंह राणा****

फल विशेषांक

कीवी फल एक पर्णपाती बेल है जिसके समुचित विकास तथा उच्च फलन के लिए सिधाई एवं काट-छाँट की आवश्यकता होती है। सफल प्रबन्धन इस बात पर भी निर्भर करता है कि काट-छाँट अच्छी तथा खुले तरीके से की जाए ताकि बेलें आपस में न उलझें। अगर पौधों की टहनियों के बीच में पर्याप्त स्थान हो तो फूल आने के समय मधुमक्खियों की हलचल अच्छी रहती है। इससे परागण प्रभावी होता है। प्रकाश भी पौधों की विभिन्न टहनियों तक ठीक पहुंचता है और रोगों का प्रकोप कम होने के साथ फल पकने में सुविधा होती है।

कीवी फल के पौधे को सिधाने की आवश्यकता होती है। इससे बेलों का फलन अच्छा होता है। सिधाई का मुख्य उद्देश्य पौधों को समुचित आकार प्रदान करना है ताकि तना सीधा हो सके। अन्य शीतोष्ण फलों की अपेक्षा, कीवी फल की वानस्पतिक वृद्धि एवं भार बहुत ज्यादा होने के कारण इन्हें काफी मजबूत सहारे की आवश्यकता होती है। इससे सभी प्रकार की सस्य क्रियाएं जैसे छिड़काव, परागण, फलों की तुड़ाई आदि कार्य आसानी से किए जा सकते हैं। सिधाई के लिए ऐसे ढाँचे की आवश्यकता होती है जिसकी लागत कम हो। सामान्यता एंगल आयरन या सीमेंट का ढाँचा सिधाई के लिए उपयोग में लाया जाता है। सिधाई के लिए विभिन्न सहारों को पौधा लगाने से पूर्व बगीचे में लगा देना चाहिए। अगर किसी कारण इन सहारों को पहले नहीं लगाया जा सका हो तो पौधे लगाने के एक वर्ष के अन्दर लगाना तथा पौधों को सीधे लकड़ी के खम्बे या बांस के सहारे बाँधना आवश्यक होता है। कीवी फल की सिधाई के लिए दो विधियां उपयुक्त पाई गई हैं, एक टी -बार तथा दूसरी परगोला विधि है।

टी-बार सिधाई

टी-बार विधि में लोहे या सीमेंट के खम्बे, जो 8 मीटर लम्बे होते हैं, 6 मी. के अन्तर पर लगाए जाते हैं। एक आड़ी तार हर खम्बे पर लगाई जाती है तथा शेष 5 सीधी तारें लगाई जाती हैं। इनका आपसी अन्तर 45 सें.मी. रखा जाता है। मुख्य शाखा से निकल रही टहनियों को इन 5 तारों पर सिधाया जाता है। एक वेगवती शाखा को मुख्य तने के लिए चुना जाता है जिसे तार तक पहुँचाया जाता है। जब शाखा 2 मी. लम्बी हो जाए तो इसे तार के साथ बाँध दिया जाता है ताकि वृद्धि ठीक प्रकार से हो सके। मुख्य शाखा को तार के पास काटा जाता है ताकि वहाँ से दो टहनियाँ (लेटरल या आर्मज) विपरीत दिशा में निकाली जा सकें। इन्हें मुख्य शाखाओं की तरह सिधाया जाता है। स्थाई शाखाओं से, अस्थायी फल देने वाली शाखाएँ 25-30 सें.मी. ली जाती हैं। ये शाखाएँ 90° के कोण पर लेनी चाहिए क्योंकि इस से टहनियाँ ठीक दिशा में पहुंचती हैं और फलन अधिक होता है। इन्हें बाहर वाली तार के साथ बाँध दिया जाता है। इन शाखाओं पर फल पहले लगते हैं

टी-बार सिधाई

*फल विज्ञान विभाग, **मूल विज्ञान विभाग, डॉ यशवंत सिंह परमार बागवानी और वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, हिमाचल प्रदेश

तथा बाद में इन शाखाओं से निकली टहनियों पर फल लगते हैं।

परगोला सिधाई

इस विधि से सिधाई लगभग टी–बार जैसे ही होती है। इसमें पौधों को 1.8 मी की ऊँचाई तक एक ही तने पर रखा जाता है। इसके ऊपर चारों तरफ शाखाओं को फैलने दिया जाता है, बाद में अच्छी तरह से विकसित पौधा छतरी की तरह दिखाई देता है। इस विधि से सिधाई करने से समकोण (90° के लिए शाखाओं को मुख्य तने से समकोण 90°) पर फलदायक शाखाओं से लिया जाता है। इस विधि में अच्छी फलत के हिसाब से फल प्रदान करने वाली शाखाओं को काफी लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। तथा अस्थाई शाखाओं को इन्ही फलदायक शाखाओं से चुना जाता है। सामान्यता एक अच्छा परगोला बनाने के लिए कम से कम 7 वर्ष का समय लगता है।

काट–छाँट (प्रूनिंग)

कीवी फल की काट–छाँट एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है, जोकि बगीचे में प्रतिवर्ष दिसम्बर–जनवरी तथा जून–जुलाई के महीनों में किया जाता है। काट–छाँट का मुख्य उद्देश्य फलोत्पादक वृद्धि में संतुलन बनाना है ताकि प्रतिवर्ष अच्छी गुणवत्ता वाले फल अधिक संख्या में लगें। इसलिए पौधों की काट–छाँट सावधानी से करनी चाहिए तथा इसके लिए पौधों की वृद्धि की प्रक्रिया का ज्ञान होना आवश्यक है। कीवी फल में फल सामान्यतौर से नई शाखाओं पर लगते हैं, जो फलदायक शाखाओं के नीचे की कलिकाएँ 5 से 12 गांठों पर होती हैं, उन्हीं पर फल आते हैं।

काट–छाँट (प्रूनिंग) से पहले

सफलतम कटाई–छँटाई से कीवी फल के बगीचे में पौधों को काफी सघन एवं आपस में उलझने से रोका जाता है। इससे फूलने के समय प्रभावी परागण के लिए प्रकाश एवं हवा का आसानी से आवागमन हो सके। कटाई–छँटाई करते रहने से पौधों के चारों तरफ प्रकाश पर्याप्त मात्रा में पौधे के ऊपर पड़ सके ताकि आगामी वर्षो में फल को पकने में आसानी हो। हर कीवी फल की बेलें वर्ष में 3–5 मी. तक विकसित हो जाती हैं।

सावधानियाँ

- काट–छाँट उचित समय पर करें व करने वाले व्यक्ति को तकनीकी जानकारी होनी चाहिए।
- काट–छाँट करने वाले व्यक्ति को न बदलें।
- काट–छाँट करने वाले औजार तेज धार वाले हों।
- काट–छाँट के बाद कटे हुए शीर्ष पर बोर्डो पेस्ट या चौबटिया पेस्ट लगाना चाहिए व कॉपर ऑक्सीक्लोराईड (600 ग्राम/200 ली. पानी) के घोल का छिड़काव करें।

काट–छाँट के बाद

अतः यह कार्य वर्ष में दो बार किया जाता है एक शीतकालीन और दूसरा ग्रीष्मकालीन।

शीतकालीन काट–छाँट

शीतकालीन काट–छाँट दिसम्बर–जनवरी के महीने में की जाती है। इसका मुख्य उद्देश्य पौधों की शाखाओं पर एक साल पुरानी शाखाओं का उचित स्थानों पर सही वितरण करना होता है ताकि फलदायक शाखाओं को बड़ी संख्या में विकसित किया जा सके। ये एक साल पुरानी शाखाएँ क्रमशः फलदायक शाखा, पुरानी फलदायक शाखाओं से निकली उपशाखा या उचित जगह पर चुने हुए स्पर हो सकती हैं। इसके अलावा शीतकालीन काट–छाँट के दौरान विशेष रूप से रोगग्रस्त, सूखी शाखाओं को भी काट देना चाहिए। फल देने वाली उपशाखाएँ जिनकी वानस्पतिक वृद्धि रुक गई हो या आपस में उलझ गई हों, को भी काट देना चाहिए जिससे नई फल प्रदान करने वाली शाखाओं का विकास हो सके। कटाई–छँटाई के बाद निकली हुई शाखाओं को फुहार कक्ष (मिस्ट–चैम्बर) में कलम तैयार करने के उपयोग में लाया जा सकता है।

ग्रीष्मकालीन काट–छाँट

ग्रीष्मकालीन काट–छाँट, विशेष कर, हेवर्ड किस्म के लिए महत्वपूर्ण होती है। इस किस्म में मध्य वानस्पतिक वृद्धि की शाखाओं पर ही फलत प्राप्त होती है। अन्य किस्मों में ज्यादा वानस्पतिक वृद्धि वाली लम्बी–शाखाओं को खींचकर भूमि की समानान्तर दशा में बाँध दिया जाता है। इस तरह से उनमें अच्छी फलत प्राप्त होती है। अधिक मात्रा में फल देने योग्य शाखाओं को बनाने, उलझी हुई तथा छाया देने वाली शाखाओं को अलग करने के लिए ग्रीष्मकालीन कांट–छाँट वसन्त ऋतु से शुरू हो कर जुलाई माह तक चलती है। शुरू में फलदायक शाखाएं काफी नाजुक होती हैं तथा थोड़े शीर्ष भाग को काटने से उनमें मजबूती आती है जिससे हवा के तेज प्रभाव से वह टूटती नहीं हैं। ग्रीष्मकालीन काट–छाँट जुलाई के महीने में या इससे पहले–ही समाप्त कर लेनी चाहिए। ■

उन्नत तकनीक

कैसे लें अनार की बम्पर फसल

दुर्गाशंकर मीना*, मूलाराम* और हरि सिंह मीना**

अनार, भारत में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण फल फसल है। इसका उत्पत्ति स्थान ईरान है। उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु का फल वृक्ष होने के कारण यह सूखा सहनशील होने के साथ-साथ कम लागत में अधिक आमदनी देता है। अनार का फल कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, सल्फर, लौह तत्व तथा विटामिन और प्रोटीन का अच्छा स्रोत है। इसका प्रयोग खाने एवं फल-रस, सीरप, स्क्वैश, जेली, रस केंद्रित, कार्बोनेटेड कोल्ड-ड्रिंक्स, अनार-दाने की गोलियाँ, अम्ल आदि जैसे प्रसंस्करित उत्पादों के उत्पादन लिए भी किया जाता है।

फल विशेषांक

भारत का नाम दुनिया में अनार की खेती करने में प्रथम स्थान रखता है। देश में प्रमुख अनार उत्पादक राज्य महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, आंध्र-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, तमिलनाडु और राजस्थान हैं।

जलवायु

अनार एक उपोष्ण जलवायु का पौधा है तथा पाला व शुष्कता के प्रति सहिष्णु है। इसमें फल विकास एवं पकने के समय गर्म और शुष्क जलवायु होने पर उत्तम गुणवत्ता के फल लगते हैं। कम सर्दी वाले क्षेत्रों में यह पर्णपाती होता है, जबकि उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु में सदाबहार होता है। इसके फलों के विकास के लिए अधिकतम तापमान 35 -38°C तापमान आवश्यक होता है।

*कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान, **पादप कार्यिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

मृदा

अनार को कम उपजाऊ मिट्टी से लेकर उच्च-उपजाऊ मिट्टी में उगाया जा सकता है। यह कुछ हद तक मिट्टी में लवणता और क्षारीयता को सहन कर सकता है। इसकी खेती के लिए गहरी दोमट मिट्टी, जिसका पीएच मान 6.5 से 7.5 के बीच हो, उपयुक्त रहती है।

अनार का बाग

भूमि की तैयारी

भूमि में मोल्ड बोल्ड हल से 2-3 गहरी जुताइयां करें। इसके तुरन्त बाद हैरो से जुताई करें ताकि मिट्टी महीन हो जाये। इसके बाद समतलीकरण कर दें।

प्रवर्धन विधि

अनार के पौधे को व्यावसायिक रूप से कलम, गूटी और टिश्यू कल्चर के माध्यम से प्रसारित किया जा सकता है।

कलम विधिः कटिंग या कलम के लिए 9 से 12 इंच लम्बी एक साल पुरानी शाखा, जिसमें 4-5 कलियां हों, का चयन कर लें। कलम लगाने के लिए सबसे उपयुक्त समय फरवरी माह होता है।

उन्नत किस्में

अनार की उन्नत किस्में भगवा, रूबी, एन. आर. सी. हाइब्रिड -6ए एन. आर. सी. हाइब्रिड -14ए अरक्ता, गणेश, जालौर सीडलैस, मृदुला, जोधपुर रेड, G-137 बेदाना, मस्कट, ज्योति, दारू, वंडर और जोधपुर लोकल आदि हैं।

गूटी या एयर लेयरिंग विधिः एयर लेयरिंग विधि से पौधे तैयार करने के लिए 2-3 साल पुराने स्वस्थ पौधों का चयन करना चाहिए। इसके बाद पेंसिल आकार की शाखा का चुनाव करें। चुनी गयी शाखा में से 2.5-3.0 सेंमी. छाल को उतार लें। इसके बाद जड़ फुटान हार्मोन से 1.5-2.5 ग्राम की दर से उपचारित करके नम मॉस घास या फिर कोकोपिट से छिले हुई शाखा को लपेट दें। जब गूटी किये गए भाग की जड़ें भूरे रंग की होने लग जाएं, तब गूटी किये भाग को कट लगाकर मातृ पौधे से अलग कर लेना चाहिए।

गड्ढों की तैयारी एवं रोपण

अनार को लगाने के लिए गड्ढों का आकार 60 सेंमी. लम्बा, चौड़ा और गहरा रखा जाता है। गड्ढों की खुदाई के बाद इन्हें 10 से

फलदार अनार का पेड़

पूर्ण परिपक्व अनार के फल

15 दिन तक धूप में खुला छोड़ दिया जाता है ताकि गड्ढों में हानिकारक कीड़े-मकोड़े व कवक इत्यादि मर जाएं। मानसून के दौरान, गड्ढों को गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट (10 किग्रा), सिंगल सुपरफॉस्फेट (500 ग्राम), नीम की खली (1 किग्रा) तथा क्विनॉलफॉस 50-100 ग्राम से भर दिया जाता है। पौधों के बीच की दूरी 10 से 12 फीट और पंक्तियों के बीच दूरी 13-15 फीट रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

खाद एवं उर्वरक की संस्तुत खुराक के तौर पर 600-700 ग्राम नाइट्रोजन, 200-250 ग्रा. फॉस्फोरस और 200-250 पोटाश प्रति पौधे की दर से प्रत्येक वर्ष देना चाहिए। देसी खाद, सुपर फॉस्फेट व पोटाश की पूरी मात्रा एवं यूरिया की आधी मात्रा फूल आने के करीब 6 सप्ताह पूर्व दें। यूरिया की शेष मात्रा फल बनने पर दें।

सिंचाई

अनार एक सूखा सहनशील फसल है और यह कुछ सीमा तक पानी के अभाव में भी पनप सकता है। सर्दियों के दौरान 10-12 दिनों और गर्मियों के मौसम में 4-5 दिनों के अंतराल में सिंचाई अवश्य करें।

कीट

1. अनार की तितली या फल छेदक-यह अनार का एक प्रमुख कीट है। यह अनार के विकासशील फलों में छेद कर देता है। इसके कारण फल फफूंद एवं जीवाणु संक्रमण के प्रति अतिसंवेदनशील हो जाते हैं।

नियंत्रण - फॉस्फोमिडॉन 0.03 प्रतिशत या सेविन 4 ग्राम प्रति लीटर का पानी में घोलकर बनाकर छिड़काव करके इस कीट से छुटकारा पाया जा सकता है।

2. छाल भक्षक-यह कीट मुख्य तने पर छेद बनाता है तथा तने के अंदर सुरंगों का एक जाल बना लेता है। इसके कारण पौधे की शाखाएं तेज हवा चलने पर टूट जाती हैं।

नियंत्रण-इस कीट के प्रभावी नियंत्रण के लिए, कीट द्वारा बनाये गये छेदों को डीजल अथवा केरोसिन में रूई भिगोकर बंद कर देते हैं।

व्याधियाँ

1. जीवाणु पत्ती धब्बा रोग या तैलीय धब्बा रोग- इस रोग में पादप के तने, पत्तियों एवं फलों पर छोटे गहरे भूरे रंग के पानी से लथपथ धब्बे बनते हैं। जब संक्रमण अधिक हो जाता है तो फल फटने लग जाते हैं।

नियंत्रण-इसके प्रभावी नियंत्रण के लिए स्ट्रेप्टोमाइसीन 0.5 ग्राम और कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.0 ग्राम प्रति लीटर के हिसाब से मिश्रण करके छिड़काव करें।

2. फल फटना या फल फूटना-यह अनार का एक गंभीर दैहिक विकार है। जो सामान्यतया अनियमित सिंचाई, बोरॉन की कमी और दिन अथवा रात के तापमान में अचानक उतार-चढ़ाव के कारण होता है। इस विकार में फल फट जाते हैं।

अनार का फल छेदक

अनार का फल फटना

नियंत्रण-इसके नियंत्रण के लिए बोरॉन का 0.1% की दर से और GA_3 का 250 पीपीएम की दर से पर्णीय छिड़काव करें। इसके अलावा मृदा में उपयुक्त नमी बनाये रखें।

फलों की तुड़ाई-अनार के फलों की तुड़ाई इष्टतम परिपक्व अवस्था पर करनी चाहिए। फलों की परिपक्वता और तुड़ाई का आकलन करने के लिए अनेक प्रकार के संकेतों का उपयोग किया जाता है; जैसे कि गहरे गुलाबी रंग का फल की सतह पर विकसित होना। अनार के फलों के तल में स्थित कैलिक्स का अंदर की तरफ मुड़ जाना। एरिल का गहरे लाल या गुलाबी रंग में बदलना।

उपज

एक स्वस्थ अनार के पेड़ से पहले वर्ष में 12 से 15 किग्रा एवं दूसरे वर्ष में लगभग 15 से 20 किलोग्राम उपज प्राप्त होती है।

फलों की ग्रेडिंग

अनार के फल आमतौर पर उनके आकार और वजन के अनुसार वर्गीकृत किए जाते हैं। निर्यात उद्देश्य के लिए राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के अनुसार ग्रेड विनिर्देश निम्नानुसार हैं;

सारणी : फलों की ग्रेडिंग

क्र.सं.	ग्रेडिंग	फलों का वजन
1	सुपर आकार	750 ग्राम
2	राजा का आकार	500-700 ग्राम
3	रानी का आकार	400-500 ग्राम
4	राजकुमार का आकार	400-500 ग्राम

तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन

सफाई और धुलाई: इस विधि में कटाई के बाद, रोगग्रस्त और फटे हुए फलों को हटा दिया जाता है। शेष बचे हुए स्वस्थ फलों को सोडियम हाइपोक्लोराइड के 100 ppm पानी के घोल से धोना चाहिए। यह उपचार माइक्रोबियल संदूषण को कम करने और लंबे शेल्फ-जीवन को बनाए रखने में मदद करता है।

पैकेजिंग: अनार के फल घरेलू और स्थानीय बाजारों के लिए लकड़ी या प्लास्टिक के बक्से में पैक किए जाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय बाजार के लिए मुख्य रूप से नालीदार फाइबरबोर्ड बक्से का उपयोग किया जाता है। इसकी क्षमता 4 से 5 किग्रा होनी चाहिए।

भंडारण: अनार के फल 5° से 6° तापमान और 90 से 95% सापेक्ष आर्द्रता में भण्डारित करने पर 3 महीने तक संग्रहीत रखे जा सकते हैं। ■

ड्रैगन फ्रूट का लें भरपूर उत्पादन

खुर्शीद आलम*, मनोज कुमार सिंह, मुजीव अहमद*** और **मो. वामिक***

फल विशेषांक

ड्रैगन फ्रूट के पौधे का उपयोग सजावट के साथ-साथ फल उपजाने के लिए किया जाता है। ड्रैगन फ्रूट बाहर से अनन्नास की भांति दिखाई देता है, लेकिन अन्दर से गूदा सफेद और काले छोटे-छोटे बीजों से भरा हुआ होता है। इस आकर्षक एवं रहस्यमय फल का रंग लाल-गुलाबी होता है। इसकी त्वचा में हरे रंग की पंक्तियां होती हैं, जो ड्रैगन की तरह दिखाई देती हैं इसलिए इसको ड्रैगन फ्रूट के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट को ताजे फल के तौर पर खाने के उपयोग में ला सकते हैं। इसके साथ ही फल से जैम, आईसक्रीम, जैली, जूस और वाइन भी बना सकते हैं। सौंदर्य प्रसाधन में भी इसे फेस पैक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। ड्रैगन फ्रूट स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभदायक है। यही वजह है कि इसकी लोकप्रियता ज्यादा है। इसकी खेती सामान्यतया थाइलैंड, वियतनाम, इजरायल और श्रीलंका में लोकप्रिय है। बाजार में ड्रैगन फ्रूट के उच्च दाम मिलने की वजह से हाल के दिनों में भारत में भी इसकी खेती का प्रचलन बढ़ रहा है। कम वर्षा वाले क्षेत्र इसकी खेती के लिए उपयुक्त माने जाते हैं।

ड्रैगन फ्रूट उष्ण जलवायु का पौधा है और इसे 50 सेंमी. वार्षिक वर्षा की जरूरत होती है। इसकी खेती के लिए 20 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है। बहुत अधिक सूर्य का प्रकाश ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए लाभकारी नहीं होता है। सूर्य की रोशनी जिन इलाकों में ज्यादा हो वहां बेहतर उपज के लिए छायादार जगह में इसकी खेती की जा सकती है।

*शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग,**सह प्राध्यापक, सब्जी विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, 250110

मृदा

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए दोमट तथा रेतीली दोमट मृदा उपयुक्त मानी जाती है। अच्छे जीवाश्म और जल निकासी वाली बलुई मृदा इसके लिए सबसे अच्छी होती है। इसकी खेती के लिए मिट्टी का पीएच मान 5.5 से 7 तक उपयुक्त माना जाता है।

मृदा की तैयारी

खेत की अच्छी तरह से जुताई करके खेत को कीट-पतंगों व खरपतवारों से मुक्त कर लेना चाहिए। भूमि में 20 से 25 टन प्रति हैक्टर की दर से अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट मिला देनी चाहिए।

बुआई या पौधों को लगाना

ड्रैगन फ्रूट का प्रवर्धन कटिंग द्वारा होता है। बीज से भी इसकी बुआई की जा सकती हैं लेकिन बीज से पौधा बनने में अधिक समय लगता है और मूल पेड़ के गुण उस पौधे में आएं, इसकी संभावना भी कम रहती है। इसलिए यह इसकी व्यावसायिक खेती के अनुकूल नहीं माना जाता है। उच्च गुणवत्ता के पौधे की छंटाई कर 20 सेंमी. लंबी कलम को खेत में लगाने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए। कलम को लगाने से पहले मूल पेड़ की छंटाई करके इनका ढेर बना लेना चाहिए। फिर इन पौधों को सूखे गोबर के साथ

ड्रैगन फ्रूट की बुआई

मिलाकर मिट्टी, बालू और गोबर के 1:1:2 के अनुपात में मिलाकर रोप देना चाहिए। रोपने से पहले इन्हें छाया में रखा जाए ताकि सूरज की तेज रोशनी से कलम को नुकसान न पहुंचे। दो पौधों के रोपने में कम से कम 2 मीटर की खाली जगह छोड़ देनी चाहिए। पौधे को रोपने के लिए 60 सेंमी. गहरा और 60 सेंमी. चौड़ा गड्ढ़ा खोदना चाहिए। इन गड्ढों में पौधों की रोपाई के बाद मिट्टी डालने के साथ-साथ कम्पोस्ट और 100 ग्राम सुपर फॉस्फेट भी डालनी चाहिए। इस तरह से एक एकड़ खेत में ज्यादा से ज्यादा 1700 ड्रैगन फ्रूट के पौधे लगाए जा सकते हैं। इन पौधों को तेजी से बढ़ने में मदद करने एवं सहारा देने के लिए लकड़ी या कंक्रीट लगाया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक

ड्रैगन फ्रूट के पौधों की वृद्धि के लिए जीवाश्म तत्व प्रमुख भूमिका निभाते हैं। प्रत्येक पौधे की अच्छी वृद्धि की लिए 10 से 15 किलो जैविक कम्पोस्ट अथवा जैविक उर्वरक दिया जाना चाहिए। इसके बाद प्रत्येक साल दो किलो जैविक खाद की मात्रा बढ़ाई जानी चाहिए। इस फसल के समुचित विकास के लिए रासायनिक खाद की भी आवश्यकता होती है। वानस्पतिक अवस्था में ड्रैगन फ्रूट को रासायनिक खाद पोटाश: सुपर फॉस्फेट: यूरिया 40:90:70 ग्राम प्रति पौधे की दर से देना चाहिए। जब पौधों में फल लगने का समय हो जाए तब कम मात्रा में नाइट्रोजन और अधिक मात्रा में पोटाश दिया जाना चाहिए ताकि उपज अधिक प्राप्त हो। फूल आने से लेकर फल आने तक यानी कि फूल आने के ठीक पहले अप्रैल में फल आने के

ड्रैगन फ्रूट

समय जुलाई-अगस्त और फल को तोड़ने के दौरान दिसंबर तक में निम्न अनुपात में रासायनिक उर्वरक दिया जाना चाहिए; यूरिया: सुपर फॉस्फेट: पोटाश 50:50:100 ग्राम प्रति पौधा। रासायनिक उर्वरक की मात्रा प्रत्येक साल 220 ग्राम बढ़ायी जानी चाहिए, जिसे बढ़ाकर 1.5 किलो तक किया जा सकता है।

सिंचाई

ड्रैगन फ्रूट के पौधों को दूसरे पौधों की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है। इस प्रकार रोपण, फूल आने एवं फल विकास के समय तथा गर्म व शुष्क मौसम में बार-बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसके लिए सिंचाई की बूंद-बूंद पद्धति का उपयोग करना चाहिए।

पुष्पण व फलन

ड्रैगन फ्रूट के पौधे एक साल में ही फल देने लगते हैं। पौधों में मई से जून के महीने में फूल लगते हैं और अगस्त से दिसंबर तक फल आते हैं। फूल आने के एक महीने के बाद ड्रैगन फ्रूट को तोड़ा जा सकता है। पौधों पर दिसंबर महीने तक फल आते हैं। इस अवधि में एक पेड़ से कम से कम छह बार फल तोड़े जा सकते हैं। फल तोड़ने लायक हुए हैं या नहीं, इसका फलों के रंग से आसानी से पता लगाया जा सकता है। कच्चे फलों का रंग गहरे हरे रंग का होता है जबकि पकने पर

ड्रैगन फ्रूट का पौधा

इसका रंग लाल हो जाता है। रंग बदलने के तीन से चार दिनों के अंदर फलों को तोड़ना उपयुक्त होता है। अगर फलों का निर्यात किया जाना हो तो रंग बदलने के एक दिन के भीतर ही इसे तोड़ लिया जाना चाहिए।

कीट व रोग

सामान्यत: ड्रैगन फ्रूट में कीट और रोगों का प्रकोप कम होता है। फिर भी इसमें एंथ्रेक्नोज रोग व थ्रिप्स कीट का प्रकोप देखा गया है। एंथ्रेक्नोज रोग के नियंत्रण के लिए मैन्कोजेब दवा के घोल का 0.25 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें। थ्रिप्स के लिए एसीफेट दवा का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

उपज

ड्रैगन फ्रूट एक सीजन में 3 से 4 बार फल देता है। प्रत्येक फल का वजन लगभग 300 से 800 ग्राम तक होता है। एक पौधे पर 45 से 125 फल लगते हैं। इस प्रकार इसकी औसत उपज पांच से छह टन प्रति एकड़ प्राप्त होती है। ■

ड्रैगन फ्रूट से स्वास्थ्य लाभ

ड्रैगन फ्रूट एंटीऑक्सीडेंट, वसा, विटामिन, खनिज और प्रोटीन का उच्चतम स्रोत माना जाता है। इससे मधुमेह रोग को नियंत्रित करने में मदद मिलती है। यह कॉलेस्ट्रॉल को कम करने में सहायक है। ड्रैगन फ्रूट आर्थराइटिस की बीमारी से भी बचाता है। यह हृदय रोगियों के लिए उत्तम आहार, वजन नियंत्रित करने में सहायक व बुढ़ापे का असर कम करता है। ड्रैगन फ्रूट अस्थमा से लड़ने में भी मदद करता है

ड्रैगन फ्रूट के प्रकार

- सफेद रंग के गूदे वाला लाल रंग का फल
- लाल रंग के गूदे वाला लाल रंग का फल
- सफेद रंग के गूदे वाला पीले रंग का फल

स्ट्रॉबेरी की खेती को बनाएं व्यावसायिक उद्यम

विशम्भर दयाल*, कर्म बीर*, रवि एस. सी* और **आलोक कुमार गुप्ता***

स्ट्रॉबेरी सबसे लोकप्रिय तथा पोषक तत्वों से भरपूर फल है। ये आकर्षक दिखने वाले, चमकीले लाल रंग, स्वाद में खट्टे-मीठे, पौष्टिक, उत्कृष्ट सुगंध और रस से भरपूर फल हैं। स्ट्रॉबेरी फल पकने पर लाल रंग के साथ दिल के आकार का होता है। यह अन्य फलों की तुलना में सबसे कम समय में अधिक लाभ देने वाली फसल है। भारत में पहले स्ट्रॉबेरी की खेती केवल पहाड़ी क्षेत्रों जैसे उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, कश्मीर घाटी, इत्यादि क्षेत्रों में ही की जाती थी पर अब देश के अन्य भागों में भी इसकी फसल उगाई जा रही है।

फल विशेषांक

वर्तमान में स्ट्रॉबेरी की खेती उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, बिहार आदि राज्यों में भी सफलतापूर्वक की जा रही है। इसका उपयोग कई मूल्य संवर्धित उत्पादों जैसे आईसक्रीम, जैम, जैली, कैंडी, जूस इत्यादि बनाने के लिए किया जाता है।

स्वास्थ्य के लिए स्ट्रॉबेरी के फायदे: स्ट्रॉबेरी विटामिन ए, बी1, बी2, नियासीन और विटामिन सी का उत्कृष्ट स्रोत है। खनिज सामग्री से भरपूर व एंटीऑक्सीडेंट के सबसे अच्छे प्राकृतिक स्रोतों में से यह एक है। स्ट्रॉबेरी मानव स्वास्थ्य को विभिन्न लाभ प्रदान करती है, जिसमें हृदय रोग के जोखिम को कम करने और कोलन कैंसर की रोकथाम शामिल है। इसके अलावा आंखों के स्वास्थ्य के लिए अच्छी है। मधुमेह रोगियों में रक्त शर्करा के स्तर को विनियमित करना, प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देने, हड्डी को मजबूत करने, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल समस्या की रोकथाम में भी इसकी उपयोगिता है। यह फोलिक एसिड का अच्छा स्रोत होने के कारण महिलाओं के लिए अत्यंत लाभकारी है। स्ट्रॉबेरी की पोषण संरचना की जानकारी सारणी में दी गई है ।

मृदा: स्ट्रॉबेरी को रेतीली से लेकर बलुई दोमट सहित कई प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। इसके समुचित विकास के लिए नमी, कार्बनिक पदार्थ और जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी आवश्यक है। स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए आदर्श पीएच मान 5.7 से 6.5 का होना आवश्यक है।

भूमि की तैयारी और पौध रोपण: खेत की गहरी जुताई के बाद मिट्टी को अच्छी तरह से भुरभुरी करके तैयार करना चाहिए। रोपण से पहले मिट्टी में अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद को 20-25 टन प्रति हैक्टर के अनुसार खेत में अच्छी तरह मिला लेना चाहिए। उत्तरी भारत में स्ट्रॉबेरी की रोपाई सितंबर से नवंबर के मध्य की जा सकती है। रोपण करते समय यह ध्यान रहे कि रोपण सामग्री स्वस्थ तथा कीट एवं रोगरहित होनी चाहिए। इसके रोपण की दूरी 30 से 60 सेंटीमीटर रखते हैं। इससे प्रति हैक्टर लगभग 50 हजार से 60 हजार पौधों की जरूरत होती है। अधिक उपज प्राप्त करने के लिए पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की दूरी क्रमशः 30

*भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, पोस्ट-काकोरी, लखनऊ

व 60 सेंटीमीटर रखी जा सकती है। स्ट्रॉबेरी के पौधों की सफलता दर इस बात पर निर्भर करती है कि पौधों को किस प्रकार से लगाया जाता है। पौधे को उचित गहराई पर स्थापित करना और मिट्टी को जड़ के चारों तरफ से अच्छी तरह से दबा देना बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि क्राउन (निचला मोटा तना) बहुत उथला है, तो यह सूख जाएगा। यदि इसे बहुत गहरा दबाया जाएगा तो भी पौधे का विकास नहीं होगा। अतः क्राउन मिट्टी की सतह पर रहना चाहिए।

स्ट्रॉबेरी की उन्नत किस्में: भारत में स्ट्रॉबेरी की बहुत सी किस्में उगाई जाती हैं। उत्तर भारत में व्यावसायिक खेती के लिए सही किस्मों का चुनाव बहुत जरूरी है। किस्मों का चयन क्षेत्र की जलवायु एवं भूमि की विशेषताओं को ध्यान में रखकर ही करना चाहिए। उत्तर भारत में उगाई जाने वाली कुछ प्रमुख किस्में इस प्रकार हैं, जैसे- कैमा रोजा, स्वीट चार्ली, फेस्टिवल चान्डलर और विन्टर डॉन इत्यादि।

मल्चिंग: मल्चिंग खरपतवार की वृद्धि को रोकता है, फसल को पाले से बचाती है और मिट्टी के कटाव की भी रोकथाम करती है। आमतौर पर इस्तेमाल की जाने वाली मल्चिंग सामग्री में पुआल, सूखी घास का उपयोग करते हैं। काली पॉलीथिन सामग्री से मल्चिंग करने पर खरपतवार नियंत्रण अच्छा होता है और कुल उपज में वृद्धि होती है।

सिंचाई: पौध रोपण के बाद पहले कुछ हफ्तों में स्ट्रॉबेरी के पौधों को नियमित रूप से पानी दिया जाना चाहिए ताकि जड़ विकास और खेत में पौधे की स्थापना व वृद्धि सुचारू रूप से हो सके। फल लगने के बाद पानी का अधिक उपयोग ग्रे मोल्ड (*बोट्रीटिस सिनेरिया*) के विकास को प्रोत्साहित कर सकता है जिसके परिणामस्वरूप फल सड़ जाते हैं।

सारणी: स्ट्रॉबेरी में पाये जाने वाले तत्व (100 ग्राम खाने योग्य भाग में)

पानी	89.9 ग्राम
प्रोटीन	0.7 ग्राम
वसा	0.5 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	8.4 ग्राम
विटामिन ए	60 अं. इ.
थायोमिन बी	0.03 मिलीग्राम
राईबोफ्लेबिन बी	0.07 मिलीग्राम
नियासीन	0.60 मिलीग्राम
एस्कार्बिक एसिड (विटामिन सी)	59.0 मिलीग्राम
कैल्शियम	21.0 मिलीग्राम
फॉस्फोरस	21.0 मिलीग्राम
लोहा	1.0 मिलीग्राम
सोडियम	1.0 मिलीग्राम
पोटेशियम	164 मिलीग्राम

खाद और उर्वरक: स्ट्रॉबेरी एक उथली जड़ वाली फसल है और इसकी 75 प्रतिशत से अधिक जड़ें 15 सेंमी गहराई तक पाई जाती हैं। कम से कम 6 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थयुक्त उपजाऊ, अच्छी तरह से तैयार मिट्टी में लगाए जाने पर यह सबसे अच्छा उत्पादन देती है। नमी बनाए रखने के लिए कार्बनिक पदार्थ को मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। कार्बनिक पदार्थों का योग मिट्टी में बढ़ाने के लिए प्रति हैक्टर 25-30 टन गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग वांछनीय है। उर्वरकों की सही मात्रा प्रति हैक्टर निम्नानुसार देनी चाहिए: नाइट्रोजन- 20 से 25 कि.ग्रा., फॉस्फोरस- 40 से 50 कि.ग्रा., पोटाश- 60 से 80 कि.ग्रा.। इससे गुणवत्तायुक्त फलों का उत्पादन होता है।

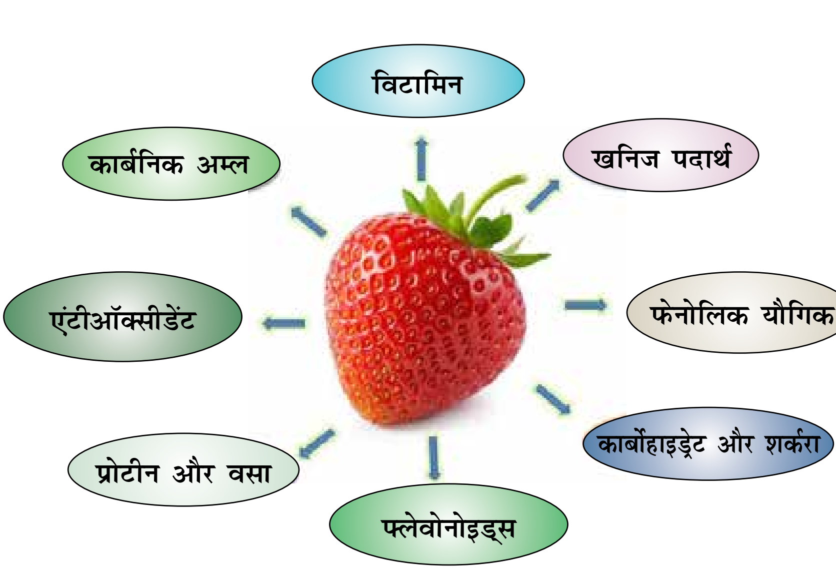

स्ट्रॉबेरी की पोषण संरचना

कीट और रोग प्रबंधन: स्ट्रॉबेरी में थ्रिप्स का प्रकोप होने पर कोनफीडोर 0.5 मि.ली प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। लाही कीट से बचाव के लिए मेटासिस्टॉक्स 1 मिली. प्रति लीटर पानी में डालकर तीन-चार दिनों के अंतराल में छिड़काव करना चाहिए। एन्थ्रेक्नोज रोग का लक्षण दिखाई देने पर कैप्टॉफ 1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से इसका नियंत्रण किया जा सकता है। ग्रे मोल्ड की रोकथाम डाईथेन M 45 1.5 ग्राम प्रति लीटर से की जाती है।

तुड़ाई एवं उपज: स्ट्रॉबेरी के फलों के समान रूप से लाल रंग का हो जाने पर तुड़ाई करनी चाहिए। फलों को जुड़े डंठल के साथ पूरी तरह से तोड़ा जाना चाहिए। फलों की तुड़ाई के समय हाथ या किसी भी शारीरिक चोट से नुकसान नहीं होना चाहिए। स्ट्रॉबेरी फलों की तुड़ाई का इष्टतम समय सुबह जल्दी होता है जब वातावरण ठंडा होता है। स्ट्रॉबेरी की औसत उपज 8-12 टन/हैक्टर तक होती है।

लागत और प्रतिफल: स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए प्रारंभिक लागत जैसे ड्रिप सिंचाई, बाड़ लगाना, प्लास्टिक मल्चिंग और लो टनल शामिल हैं। इनकी लागत लगभग 1.5 से 2.5 लाख रुपये प्रति हैक्टर आती है। प्रमुख उत्पादन लागत लगभग 2.0 से 2.5 लाख रुपये प्रति हैक्टर के बीच है। अतः इसमें कुल उत्पादन लागत लगभग 5.0 से 6.0 लाख रुपये प्रति हैक्टर है। स्ट्रॉबेरी की अच्छी तरह से प्रबंधित फसल प्रति हैक्टर 8-12 टन तक उपज दे सकती है। इसकी खेती से शुद्ध आय लगभग 10 से 12 लाख रुपये प्राप्त की जा सकती है।

स्ट्रॉबेरी का उत्पादन आर्थिक रूप से व्यवहार्य और लाभदायक है। राज्य में स्ट्रॉबेरी की खेती अभी भी केवल एक सीमित क्षेत्र में ही है। स्ट्रॉबेरी में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के साथ-साथ कृषि आय को भी बढ़ाने की क्षमता है। गुणवत्तायुक्त रनर की अनुपलब्धता स्ट्रॉबेरी के क्षेत्रफल के विस्तार में एक प्रमुख बाधा के रूप में पाई गई है। ■

अनार एक, लाभ अनेक

फल विशेषांक

कनुप्रिया*

अनार के खाने योग्य भाग में अम्ल, शक्कर, विटामिन, पालीसैकेराइड्स, पॉलीफिनॉल्स एवं खनिज पाए जाते हैं। इस फल के रासायनिक गुण प्रजाति, पर्यावरणिक कारक, भण्डारण एवं सस्योत्तर उपचार आदि से प्रभावित होते हैं। ये सब फल की गुणवत्ता एवं स्वास्थ्य लाभ के कारकों को प्रभावित करते हैं। रासायनिक तत्वों का अनूठा प्रति-ऑक्सीकारक गुण अन्य प्रयोगों के साथ प्रति-सूक्ष्माणवीय, प्रति-ऑक्सीकारक, ज्वलनरोधी, कैंसररोधी, मधुमेहरोधी गुण जैसे इसके जैविकी प्रभाव को भी बढ़ाता है।

फाइटोथेरेपी में इलाज हेतु पौधों या इसके रस का उपयोग किया जाता है। यह आम बीमारियों को रोकने एवं इलाज करने हुतु एक पूरक पद्धति मानी जाती है। इस आलेख में अनार, जो कि हाल के वर्षों में ग्राहकों का भरपूर ध्यान आकर्षित कर रहा है, के औषधीय गुणों पर चर्चा की जाएगी।

अनार की खेती व्यापक रूप से ईरान, भारत, अफगानिस्तान, मेडिटरेनियन देशों में तथा कुछ हद तक अमेरिका, चीन, जापान एवं रूस में की जाती है। यह आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण फल है, जिसका ताज़े रूप में उपयोग किया जाता है। रस बनाने, जेली बनाने तथा खुशबूदार एवं रंजककारक के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें औषधीय गुण भी पाए गए हैं। यह सूखे के प्रति सहनशील है। सर्दी में बलशाली तथा नियमित रूप से उच्च लवणता से प्रभावित होने वाली मरू परिस्थितिक में भी अच्छी तरह उगा सकते हैं। इसलिए हाल ही के वर्षों में इसको अत्यधिक आर्थिक एवं पारिस्थितिक महत्व प्राप्त हुआ है।

*वैज्ञानिक, भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु

प्रति-सूक्ष्माणवीय क्रियाशीलता

यह क्रिया फल में उपलब्ध फिनोलिक एवं एन्थोसियानिन की मात्रा के कारण होती है। कई नैदानिक अध्ययनों से पता चला है कि अनार के छिलके में उपलब्ध स्वाभाविक प्रति-सूक्ष्माणुओं में बीजचोल की अपेक्षा अधिक मात्रा में फिनोल पाए जाते हैं। अनार के रस एवं अनार के पॉलीफिनोल का संयोजन खाद्य पदार्थजनित विषाणु-संक्रमण के विरुद्ध प्रभावी पाया गया है। इसके अतिरिक्त अनार से शुद्ध किया गया पॉलीफिनोल रस

इनफ्लुएंजा विषाणु की रोकथाम में सहायक पाया गया। अनार के छिलके से निकाले गये प्युनिकलाजिन में खमीर के प्रति मजबूत क्रिया पाई गई। धूप में सुखाए गए छिलकों का उपयोग मलेरिया के प्रोफाइलेक्सिस के रूप में किया जाता है।

प्रति-ऑक्सीकारक क्रियाशीलता: अनार के छिलके, बीज, रस में अच्छी प्रति-ऑक्सीकारक क्षमता है। इसके निगलने के बाद इसके लिए उत्तरदायी कारक, मुख्यत: टेनिन, इसकी खपत के दौरान आंत द्वारा उपापचयी हो जाता है।

कैंसररोधी

अनार का फल, रस, बीज एवं बीज-तेल प्रति-ऑक्सीकारक, प्रसार-रोधी (वृद्धि रोककर, कोशिका चक्र के व्यवधान एवं एपोप्टोसिस) और ज्वलन-रोधी क्रिया के द्वारा प्रोस्टेट, स्तन, त्वचा, वृहदान्त्र, फेफड़ा, मुँह एवं ल्यूकेमिया कैंसर के विरुद्ध कार्य करते हैं। एललाजिक अम्ल, जो अनार के रस एवं बीज-तेल में पाया जाता है, चर्म, पेनक्रियाज, स्तन, प्रोस्टेट, वृहदान्त्र, आंत्र, ग्रासनली, मूत्राशय, मुँह, लयूकेमिया, जिगर एवं न्यूरोब्लास्टोमा कैंसर के विरुद्ध कार्य करता है।

ग्लूकोज और लिपिड उपापचय: अनार के फूल एवं पत्ते का रस वसा, कुल कोलेस्ट्रॉल, ट्रिग्लाइसेराइड एवं रक्त में ग्लूकोज का स्तर कम करता है। यह पत्तों में उपलब्ध टेनिन के एललाजिक अम्ल की मात्रा के कारण होता है।

हाल ही के वर्षों में नए यौगिकों, उत्पादन तकनीकों एवं संरक्षण पर ज्यादा जोर दिया जा रहा है। गत कुछ वर्षों में अनार के विभिन्न प्रयोगों के पेटेन्ट प्राप्त किये गए हैं, जो कि इस पौधे के महत्व को दर्शाता है। त्वचा की शुष्कता एवं क्षरण को रोकने, बालों के मनोवैज्ञानिक भावनात्मक बल को रोकने, त्वचा के नमी स्तर को सुधारने एवं बनाए रखने हेतु अनार से बनाए गए उत्पादों को पेटेन्ट प्राप्त हुआ है। आने वाले वर्षों में मौजूदा नैदानिक परीक्षणों के परिणाम से अनार के रस के अधिक लाभकारी प्रभाव का पता चलेगा और इससे इस प्राचीन फल के अनुसंधान एवं विकास को और अधिक गति मिलेगी। ■

साभार:- बागवानी पत्रिका अंक-7

विधि

बेर में कलिकायन तकनीक से अधिक फल

फल विशेषांक

मोती लाल मीणा*, **इप्सिता बिश्वास****, **निधि कुमारी***** और **पुष्पा सिंह******

शुष्क क्षेत्र बागवानी में बेर का प्रमुख स्थान है। इस क्षेत्र में बार-बार अकाल की स्थिति से निपटने के लिए भी बेर की बागवानी अति उपयोगी है। इसके फल के अतिरिक्त पेड़ के अन्य भागों का भी आर्थिक महत्व है। इसकी पत्तियाँ पशुओं के लिए पौष्टिक चारा प्रदान करती हैं एवं इससे प्राप्त शाखाएं लकड़ी जलाने और खेतों का बाड़े बनाने के लिए उपयोगी होती हैं। पत्तियों की विशेष संरचना एवं गहराई तक जाने वाली जड़ों के कारण इसके पेड़ बारानी अवस्था अथवा खारे पानी की सिंचाई देने पर भी अच्छी उपज देते हैं। बेर को शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों के फलों का राजा कहा जाता है। यह सूखे के प्रति काफी सहनशील होता है एवं क्षेत्र के किसानों के लिए आय एवं खाद्य सुरक्षा का प्रमुख स्रोत है।

भारत में मुख्य रूप से राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, पंजाब, हरियाणा एवं आंध्रप्रदेश में इसकी व्यावसायिक खेती की जाती है। कम पानी में उत्पादन होने से इसका क्षेत्रफल दिन- प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। अभी तक बेर की करीब 300 से अधिक किस्में जारी की जा चुकी हैं। राजस्थान एवं अन्य शुष्क क्षेत्रों में गोला, सेव, उमरान इत्यादि किस्में ही प्रमुख रूप से उत्पादन में प्रयोग की जा रही हैं। यह पेड़ ग्रीष्मकाल की प्रतिकूल परिस्थिति आते ही सुषुप्तावस्था में प्रवेश कर जाता है तथा वर्षाकाल आते ही बढ़वार शुरू कर देता है। यह शुष्क क्षेत्रों में उपलब्ध सीमित नमी से फरवरी-मार्च तक फल देता रहता है। यह बारानी अवस्था एवं खारे पानी में भी अच्छी उपज देता है।

साधारणतया बेर के बगीचों की स्थापना पौधशाला में कलिकायन से तैयार पौध से होती है। पौधशाला में ये पौधे थैलियों में तैयार होते हैं। जब इसे खेत में लगाया जाता है तो इनकी जड़ें टूट या मुड़ जाती हैं। इस कारण इसकी बढ़वार पर प्रतिकूल असर होता है। कलिकायन विधि से मूलवृंत को खेत में उगाकर या देशी बेर पर कलिकायन किया जाता है। शुष्क क्षेत्रों में देसी बेर के पौधे

कलिका को बांधते हुए

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की (मुजफ्फरपुर) बिहार;**विषय वस्तु विशेषज्ञ, (मत्स्य विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की (मुजफ्फरपुर) बिहार; ***विषय वस्तु विशेषज्ञ, (मृदा एवं जल अभियंत्रिकी) कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की (मुजफ्फरपुर) बिहार;****उप-निदेशक, प्रसार, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा (बिहार)

बेर में कलिकायन करते कृषक

देसी बेर पर कलिकायन करते हुए वैज्ञानिक

प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं। ये स्थानीय रूप से मिट्टी, हवा एवं जैविक वातावरण के अनुकूल होते हैं। ये पौधे कठोर होने के कारण अनुपजाऊ भूमि पर भी कम देखरेख में पनप जाते हैं। इनकी जड़ें भूमि के नीचे काफी गहराई में होती हैं और ये वर्षा के पानी पर निर्भर होती हैं।

इन पौधों पर कलिकायन कर इसे उन्नत किस्म में बदला जा सकता है। इन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा काफी मुश्किल से उपलब्ध होती है। इसके कारण नये बेर के बगीचे लगाने में काफी समस्या का सामना करना पड़ता है। किसान जानकारी के अभाव में इन पौधों से अच्छी उपज एवं गुणवता के फल नहीं ले पाते हैं। इस समस्या को दूर करने के लिए देसी बेर के ऊपर कलिकायन कर इसे उन्नत किस्म में बदल कर या एक ही पौधे पर अनेक तरह की किस्मों की कोंपलें चढ़ाकर अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

15 दिन बाद फुटान व नई शाखा

उन्नत किस्म में बदलने (कलिकायन) के लिये निम्न क्रमवार तकनीक के अनुसार क्रिया करें:-

किस्म का चुनाव:- देसी बेर को उन्नत बनाने के लिए अच्छी किस्म के पौधों से कलिका लेनी चाहिए। जैसे-गोला, सेव, थार सेविका, उमरान, इलायची, थाई बेर आदि किस्मों का चयन करना चाहिए।

कलिका लगाने की विधि

- सबसे पहले देसी बेर के पौधों का चयन कर लें।
- फिर इसे मई माह में जमीन के बराबर काट देते हैं। कटे हुए भाग के चारों ओर जून-जुलाई में वर्षा होने के साथ नए कल्ले निकलते हैं, जोकि 20-25 दिनों बाद लगभग 5-8 मि.मी. व्यास के होने पर कलिकायन योग्य हो जाते हैं।
- नये निकले हुए कल्लों में से दो या तीन कल्ले छोड़कर बाकी सभी कल्लों को सिकेटियर की सहायता से काट देना चहिये। छोड़े गए कल्लों को जमीन से 25-30 सें.मी. की ऊंचाई पर काट देते हैं तथा उन पर पत्तियाँ व कांटें भी हटा देने चाहिये।
- कलिकायन करने के लिए जमीन से 15 से 20 सें.मी. की ऊंचाई पर चाकू की सहायता से टी (T), आई (I) या उलटे टी (T) आकार में 2 से 3 सें.मी. लम्बाई में एक चीरा लगाते हैं। उस चीरे की छाल को चाकू से दोनों तरफ ढीला कर लेते हैं।
- चुनिंदा किस्मों के पौधे से चीरे की लम्बाई में आँख (बड) निकालकर लगाये गए चीरे में प्रविष्ट करवा देते हैं और प्लास्टिक की पट्टी से आँख वाले भाग को छोड़कर बांध देते हैं।
- 10-15 दिनों बाद चढ़ाई गयी आँख से कलिका स्फुटित हो जाती है, जो आगे जाकर उन्नत किस्म का पेड़ बन जाता है।

कलिकायन में सावधानी

- कलिकायन के लिए आँख (बड) लेने वाला पौधा अच्छी किस्म, गुणवता व अधिक पैदावार देने वाला होना चाहिये।
- कलिकायन करने का समय जुलाई से अगस्त तक ही उपयुक्त होता है।
- कोंपल (आंख) को छोड़कर बाकी सभी को प्लास्टिक की पट्टी से कसकर बांध देना चाहिये।
- मूल पौधे पर चीरा लगाते समय ध्यान रखें कि पौधे के तने पर निशान व कट नहीं लगें, इसलिए कट हल्के हाथ ही लगायें।
- कलिकायन लगाने के बाद प्लास्टिक से बांधते समय यह ध्यान रहे कि उसमें हवा नहीं रहे तथा बांधने वाली पट्टी को ढीला न रखें।

बेर की बिक्री

- 10 से 15 दिनों बाद उसमें उन्नत कलिकायन का फुटान हो जाता है और वह तेज वृद्धि करने लगती है। उस वक्त प्लास्टिक को हटा देना चाहिए।
- 20-25 दिनों बाद देसी बेर में नई कोंपलें निकालने लगती हैं। उन्हे काट देना चाहिए और उन्नत कलिकायन को ही बढ़ने देना चाहिए।

कलिकायन के पश्चात देखभाल

- देसी बेर के पौधों पर आँख चढाने के स्थान के नीचे व ऊपर नये कल्ले

सारणी 1: कलिकायन तकनीक अपनाने के लिये मुख्य उन्नत किस्में एवं उनकी विशेषतायें

किस्म	पौधों की ऊंचाई (मीटर)	पौधों का फैलाव (वर्गमीटर)	फल का वजन (ग्राम)	पकने का समय	उपज (कि. ग्रा. प्रति पौधा)
सेव	2.70	16.09	18.50	15 जनवरी से फरवरी का अंत	41.20
गोला	3.20	32.30	21.00	दिसम्बर के अंतिम सप्ताह से मध्य फरवरी	60.10
उमरान	2.80	22.20	25.00	फरवरी-मार्च	62.20
टिकड़ी	4.40	31.07	3.50	फरवरी-मार्च	40.00
थार सेविका	3.5	25.5	20.5	फरवरी-मार्च	35.5

सारणी 2: आयु आधारित बेर के पौधों की वृद्धि व पैदावार

पौधों की आयु (वर्ष)	पौधों की ऊंचाई (मीटर)	पौधों का फैलाव (वर्गमीटर)	उपज (कि.ग्रा. प्रति पौधा)
1	1.50	20.50	10-12
2	2.00	28.20	20-25
3	2.60	31.80	30-40

निकलते हैं। इन्हें सिकेटियर से हटाते रहना चाहिए अन्यथा कलिकायन किये भाग की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

- उन्नत किस्म की कलिका पर प्रारम्भ में कोमल होने के कारण कीट व व्याधियों का प्रकोप होने की आशंका रहती हैं अत: कीट व रोगों से बचाना चाहिए।
- जानवरों से बचाने के लिये पेड़ के चारों तरफ बाड़ लगानी चाहिये।
- पौधों में कलिका निकलने के बाद वृद्धि के समय पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पहले वर्ष जुलाई के आखिरी माह में 10-15 कि.ग्रा. सड़ी गोबर या मेंगनी खाद या केंचुआ खाद पौधों के तने से एक फीट की दूरी पर तने के चारों तरफ घेरे में डालकर मिट्टी में मिला देनी चाहिए।
- दूसरे वर्ष जून-जुलाई में 15-20 कि. ग्रा., तीसरे वर्ष 20-25 कि.ग्रा., चौथे वर्ष 25-30 कि.ग्रा. तथा पांचवे वर्ष से 30 कि.ग्रा. सड़ी गोबर या मींगनी खाद या केंचुआ खाद प्रति वर्ष डालनी चाहिये।

कलिकायन द्वारा तैयार बेर का पौधा

फलों से लदा बेर का पौधा

बेर फल 'गोला किस्म'

लाभ-लागत

बेर के बगीचे से प्रतिवर्ष एक हैक्टर क्षेत्रफल से खर्चा काटकर उन्नत किस्म के 275 पौधों से लगभग 95600 रुपये का शुद्ध लाभ मिलता है। इसके अलावा पशुओं के लिए पौष्टिक चारा भी मिलता है, जो अतिरिक्त आय का स्रोत है। इससे किसान को दोहरी आय प्राप्त होती है।

लीची स्टिंक बग की समस्या

विनोद कुमार*, **जयपाल सिंह चौधरी**** और **शेषधर पाण्डेय*****

आमतौर पर भारत के विभिन्न क्षेत्रों से लीची स्टिंक बग/लीची बदबूदार बग कीट की निम्न व्यापकता दर्ज की जाती रही है। हाल के वर्षों में लीची स्टिंक बग की व्यापकता में, विशेष रूप से झारखंड और उत्तर-पूर्वी राज्यों में वृद्धि हुई है। वर्ष 2018 में यह कीट बिहार के लीची के बागों में पहली बार देखा गया। विगत दो वर्षों में जिन बागों में इस कीट का आक्रमण हुआ था वहाँ क्षति 100% तक हुई। इस कीट के खतरे इतने गंभीर हैं कि यह लीची की खेती को पूरी तरह से खत्म करने की क्षमता रखता है। इस कीट के प्रबंधन के लिए तत्काल कार्य योजना के साथ-साथ दीर्घकालिक रणनीति की आवश्यकता है।

फल विशेषांक

लीची के बदबूदार बग का बिहार में प्रवेश संभवत: पड़ोसी राज्य झारखंड से ट्रक/लॉरी द्वारा लकड़ी लाने के क्रम में या वहाँ से आने वाले कुछ निजी वाहनों के माध्यम से हुआ हो, इसकी प्रबल आशंका लगती है। झारखंड में कुसुम (*श्लीचेरा ओलियोसा*; फैमिली- *सैपिन्डेसी*; वही कुल जिसमें लीची भी है) पेड़ बहुत हैं और बदबूदार बग का एक प्राकृतिक मेजबान वृक्ष है। यह झारखंड के राँची और आसपास के जिलों में बहुतायत में पाया जाता है, जहाँ यह बग लीची का एक प्रमुख नाशीकीट है।

*प्रधान वैज्ञानिक (पादप रोग), ** वैज्ञानिक (कीट विज्ञान), भाकृअनुप- आर.सी.ई.आर. अनुसंधान केंद्र, पलांडु, राँची-834010, झारखंड *** प्रधान वैज्ञानिक एवं निदेशक (कार्यकारी), भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर-842002, बिहार

लीची स्टिंक बग

हाल के वर्षों में लीची स्टिंक बग की व्यापकता में विशेष रूप से झारखंड और उत्तर-पूर्वी राज्यों में वृद्धि हुई है। चौधरी एवं सहयोगी (2013) ने फरवरी-मार्च, 2012 के दौरान झारखंड के छोटा नागपुर पठारी क्षेत्र में स्टिंक बग के विस्फोटक प्रकोप की जानकारी दी, जिसमें लीची के फलों को गंभीर नुकसान (80% तक) हुआ। वर्ष 2018 में स्टिंक बग की प्रविष्टि बिहार में हो गयी।

स्टिंक बग के नवजात और वयस्क दोनों ही, पौधों के ज्यादातर कोमल हिस्सों जैसे कि बढ़ती कलियाँ, पत्तियाँ, पत्तीवृंत, पुष्पक्रम, विकसित होते फलों के डंठल और लीची के पेड़ की कोमल शाखाओं से रस चूसते हैं। इससे बढ़ती कलियाँ और कोमल अंकुर सूख जाते हैं और फल काले पड़ जाते हैं। बाद में फूल और फल गिरते हैं। सुषुप्तावस्था में पड़े वयस्क जनवरी के अंतिम सप्ताह में सक्रिय हो जाते हैं और लीची के अन्य पेड़ों पर फैलना शुरू कर देते हैं मंजरी निकलने के साथ ही साथ फरवरी के पहले सप्ताह से वयस्कों का संभोग शुरू होता है और फरवरी के दूसरे सप्ताह के दौरान अंडे का समूह नई पत्तियों की निचली सतह पर देखा जा सकता है। बग गोलाकार और हल्के गुलाबी रंग के अंडे, ज्यादातर चौदह के झुण्ड में पत्तियों की निचली सतह पर देती है। बग पाँच इंस्टार (निरूप) से होकर गुजरता है। ये पहले इंस्टार को छोड़कर उप-आयताकार और गहरे ईट लाल रंग के होते हैं। नये बने वयस्क बग मलिन सफेद और मुलायम शरीर वाले कीट होते हैं लेकिन कुछ दिनों के बाद ये रंग बदलकर पीले-लाल हो जाते हैं। वयस्क बग का सिर, प्रोनोटम, स्कुटेलम और एलीट्रा हल्का भूरे रंग का होता है। शरीर का निचला भाग सफेद होता है। बग का आकार 15-20 मि.मी. के करीब होता है, और सिर छोटा त्रिकोणीय होता है। जीवनचक्र लगभग 80 दिनों में पूरा होता है। वयस्क और नवजात दोनों ही अशांत किये जाने पर आक्रामक गंध को बाहर निकालने में सक्षम होते हैं। बहुत से लोगों की पहली प्रवृत्ति बदबूदार बग को देखते ही उन्हें कुचलने की होती है। हालाँकि, जब इन्हें परेशान किया या कुचला जाता है, तो यह अपने शरीर के किनारों पर स्थित छिद्रों से खराब-गंधित, रसायन छोड़ने की प्रवृति रखते हैं। इसी वजह से इस कीट का नाम बदबूदार बग पड़ा। इससे मानव शरीर पर फफोले पड़ जाने की समस्या हो जाती है।

प्रबंधन रणनीति

वर्तमान प्रबंधन रणनीतियाँ कीटनाशक के छिड़काव (स्प्रे) पर निर्भर हैं। राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर द्वारा अनुशंसित निम्नलिखित में से किसी भी कीटनाशक संयोजन का दो छिड़काव कर इससे बचाव संभव है:

- ट्रायजोफॉस 40% ईसी (1.5 मिली/ली) + थियाक्लोप्रिड 21.7% एससी (0.5 मिली./ली.)
- थियाक्लोप्रिड 21.7% एससी (0.5 मिली/ली) + लैम्ब्डा साइहैलोथ्रिन 5% ईसी (1.0 मिली./ली.)
- थियाक्लोप्रिड 21.7% एससी (0.5 मिली./ली.) + फिप्रोनिल 5% एससी (1.5 मिली./ली.)

- डाइमेथोएट 30% एससी (1.5 मिली./ली.) + लैम्ब्डा साइहैलोथ्रिन 5% ईसी (1.0 मिली./ली.)
- डाइमेथोएट 30% एससी (1.5 मिली./ली.) + साइपरमेथ्रिन 5% ईसी (1.0 मिली./ली.)
- संयुक्त-उत्पाद [ट्रायजोफॉस (35%) + डेल्टामेथ्रिन (1%) ईसी]- 2.0 मिली./ली.

पहला स्प्रे 10 से 15 फरवरी और दूसरा स्प्रे 25 से 28 फरवरी के बीच करें। जब भी किसी कीटनाशक छिड़काव किया जाये, तो जमीन पर गिरे हुए कीटों को झाड़ू से इकट्ठा किया जाना चाहिए। इसके बाद यांत्रिक (मैन्युअल) रूप से एक गड्ढे में डालकर और मिट्टी से ढककर नष्ट कर देना चाहिए। कीटनाशकों के छिड़काव के अलावा, निम्फ/नवजात को पेड़ों पर रेंगकर चढ़ने से रोकने के लिये मार्च-अप्रैल के महीने में कीटनाशक छिड़काव के बाद ट्री बैंडिंग (पेड़ के तने पर चिपचिपी बैंड लगाना) का प्रयोग किया जा सकता है। कीटनाशी के घोल में स्टीकर का इस्तेमाल 0.4 मि.ली./लीटर की दर से करें।

लीची स्टिंक बग की रोकथाम के लिए कार्य-योजना

तत्काल कार्य योजना में संगरोध (क्वारंटाइन) और बड़े पैमाने पर बागों में 'मास कीटनाशक स्प्रे' या 'सामुदायिक स्प्रे' के माध्यम से व्यापक क्षेत्र प्रबंधन की आवश्यकता पड़ती है ताकि कीट को किसी भी तरह से अपने वर्तमान संक्रमण क्षेत्र में ही सीमित किया जा सके। इसके लिए संक्रमण के वर्तमान क्षेत्र और आसपास के क्षेत्रों में निरंतर सर्वेक्षण और निगरानी युद्ध स्तर पर की जानी चाहिये, और 'कंटेनमेंट जोन' घोषित किया जाये। इस 'कंटेनमेंट जोन' में सितम्बर-अक्टूबर में 15 दिनों के अंतराल पर यानी लीची के पेड़ों पर जाड़े की शुरुआत से पहले दो कीटनाशक स्प्रे करने की तत्काल कार्य योजना की जरूरत है। एक भी बाग कीटनाशक स्प्रे से नहीं छूटना चाहिए। इस चरण में ओर्गेनोफॉस्फेट समूह के कीटनाशक जैसे-ट्रायजोफॉस 40% ईसी (1.5 मिली/लीटर), प्रोफेनफॉस 50% ईसी (2.0 मिली/लीटर) या क्विनलफॉस 25% ईसी (2.0 मिली/लीटर) का स्प्रे उपयुक्त होगा। इसके अलावा पुष्पगुच्छ/मंजरी निकलने के समय (लेकिन फूल खिलने से पहले) दो कीटनाशक स्प्रे (सामूहिक छिड़काव) करने की आवश्यकता होगी। उस समय, एकल कीटनाशक की बजाय दो कीटनाशकों का संयोजन कर छिड़काव किया जा सकता है। इस कार्ययोजना की कार्यरूप में परिणति राज्य सरकार के कृषि विभाग द्वारा किये जाने की जरूरत है क्योंकि किसान न तो इसे वहन करने में सक्षम होगा और न ही इससे सामुदायिक स्प्रे का उद्देश्य पूरा हो पायेगा।

1. मुलायम टहनी से रस चूसते लीची बदबूदार बग, 2. फलों पर बग का क्लोज-अप दृश्य, 3. वयस्क बग, 4. एवं 5. बग से प्रभावित मंजरी और फल, और 6. फलों पर बग के रस चूसने से हुई क्षति के लक्षण

1. नर-मादा बग, 2. मादा कीट द्वारा दिये गये ताजे अंडे, 3. अंडों का झुण्ड, और 4. समूह में निम्फ चरण

कीट के प्रबंधन के लिए दीर्घकालिक रणनीति में कीट के पारिस्थितिकी-जीव विज्ञान पर शोध और वैकल्पिक प्रबंधन तरीकों में पैरासिट्ओएड (परजीवी कीट) एनास्टैटस बैंगलोरेंसिस और एनास्टैटस एकेरोंटिया जैसे सिद्ध परीक्षित जीव का उपयोग शामिल हैं। परजीवी कीट के बड़े पैमाने पर उत्पादन और बागों में छोड़ने का कार्य स्थानीय स्तर पर किये जाने की जरूरत है। इस परजीवी कीट की उपलब्धता और बड़े पैमाने पर पालन की तकनीक "राष्ट्रीय कृषि कीट संसाधन ब्यूरो (एनबीएआईआर)" बेंगलुरू के पास मौजूद है। राज्य बागवानी मिशन के तहत स्थानीय स्तर पर इस परजीवी के बड़े पैमाने पर पालन और रिलीज के लिए परियोजना का वित्तपोषण किया जा सकता है। ■

आड़ू की उन्नत बागवानी

जितेन्द्र कुमार*, **के.के. प्रमाणिक***, **अ.कु. शुक्ला***, **संतोष वाटपड़े*** और **बलदेव सिंह***

फल विशेषांक

आड़ू का उत्पादन, व्यवस्थित खेती और विपणन उत्तर-पश्चिमी भारत की पहाड़ियों में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बदल सकता है। विभिन्न आनुवांशिक परिवर्तनों और क्लोनल रूटस्टॉक्स पर गुणवत्ता वाली रोपण सामग्री की आपूर्ति के लिए नए दृष्टिकोण और ठोस प्रयासों की आवश्यकता है। उच्च घनत्व-रोपण, सूक्ष्म-सिंचाई सहित जल-प्रबंधन, पौधों की सुरक्षा के लिए एकीकृत पौष्टिक प्रबंधन और आईपीएम रणनीति कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, जिन्हें अधिक से अधिक अनुसंधान एवं विकास की जरूरत है। फल तोड़ने के बाद की प्रबंधन प्रथाओं, बुनियादी ढाँचे के विकास को अपनाना और उपज का भंडारण करना आदि तथ्यों पर विकासात्मक ध्यान देना जरूरी है। भारत में फल खरीदने वाली एजेंसियों का विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करने के लिए मूल्यवर्धन और निर्यात प्रोत्साहन करने की आवश्यकता है।

आड़ू (प्रूनस पर्सिका) रोसेसी परिवार की सबसे महत्वपूर्ण फल फसलों में से एक है, जो दुनिया के समशीतोष्ण क्षेत्रों में व्यापक रूप से उगाई जाती है। आड़ू को उत्तरी और दक्षिणी दोनों गोलार्द्धों के गर्म-शीतोष्ण क्षेत्रों में उगाया जाता है। यह व्यापक रूप से ताजा खाया जाता है और इसे पीएस और कॉब्लर में भी पकाया जाता है। कई क्षेत्रों में डिब्बाबंद आड़ू एक मुख्य फल है। सफेद गूदे वाली किस्मों की अपेक्षा पीले रंग की किस्में विशेष रूप से विटामिन-ए से भरपूर होती हैं।

आड़ू के गूदे का रंग सफेद, पीला या लाल हो सकता है। आड़ू की किस्में फ्रीस्टोन, में गुठली आड़ू के गूदे से जल्दी हट जाती है, जबकि क्लिंजस्टोन किस्मों में गूदा गुठली से आसानी से अलग नहीं होता है। अधिकांश पके आड़ू की त्वचा रूईदार होती है जबकि बिना रूईदार त्वचा वाले आड़ू को नेक्टारिन कहा जाता है। पर्णपाती फल और गुठलीदार फल भारत की बागवानी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

पोषण का खजाना

आड़ू खनिजों और विटामिनों का समृद्ध स्रोत है। इसमें अच्छी मात्रा में शर्करा होती हैं। यह फाइटोकेमिकल्स, आहार-रेशा और पॉलीफेनोल्स से समृद्ध है, जो उपभोक्ताओं को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। फ्रीस्टोन आड़ू ताजा बेचा जाता है, और दूसरे फल लगभग सभी डिब्बाबंद होते हैं। आड़ू के फल में प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग में पानी-89%, कैलोरी-38%, प्रोटीन-0.6%, वसा-0.1%, कार्बोहाइड्रेट-10%, कच्चे फाइबर-0.6%, विटामिन-ए-27%, थियामिन-बी-1-1.4%, राइबोफ्लेविन, बी-2-3.1%, नियासिन-5.6%, विटामिन-सी-15.6%, कैल्शियम-1.1%, फॉस्फोरस-2.4%, आयरन-5.0%, सोडियम-पोटेशियम-4.3% आदि होते हैं।

*भाकृअनुप-भाकृअनुसं, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला (हि.प्र.)

बिना रोएंदार फल

उत्पत्ति एवं वितरण

आड़ू की उत्पति चीन में हुई थी। आड़ू के पेड़ों को 2000 साल पहले यूरोप में फारस (ईरान) से लाया गया था। सोलहवीं शताब्दी में इसे उत्तरी अमेरिका में लाया गया था। चीन, इटली, संयुक्त राज्य अमेरिका और स्पेन आड़ू के प्रमुख उत्पादक देश हैं। शीर्ष आड़ू निर्यातक देश स्पेन, इटली, यूरोपीय संघ और संयुक्त राज्य अमेरिका हैं। शीर्ष चार आड़ू के आयातक देश जर्मनी, रूस, फ्रांस और पोलैंड हैं।

वानस्पतिक विवरण

आड़ू का पौधा जल्दी बढ़ोतरी करता है। और छोटा पेड़ आमतौर पर 6-10 फीट का होता है। पेड़ अल्पकालिक होते हैं, आमतौर पर ये केवल 15-20 साल रहते हैं।

पत्ते-पत्तियां नुकीली युक्तियों के साथ रेखीय होती हैं। इसके पतले दांतेदार किनारे, मध्यशिरा (मिडिब्री) के साथ थोड़ा मुड़ा हुआ, लंबाई में 2-6 इंच होता है।

फूल-हल्का गुलाबी, व्यास में 1-1.5 इंच एंव अंडाशय परिधीय होता है। यह हाइपेंथियम से घिरा होता है। आत्म-परागण, आम तौर पर परागणकों के बिना उगाया जाता है।

फल- फल रसदार, एंडोकार्प एकल अंडाकार बीज को घेरता है। खाद्य मेसोकार्प और त्वचा एक्सोकार्प होती है। पिंचिंग उचित आकार के फल विकास के लिए (80-95% फूलों) आवश्यक होती है।

प्रजातियाँ एवं किस्में

ठंड की स्थिति के लिए प्रजातियाँ जुलाई एल्बर्टा, एलेबर्टा, पेशवारी, क्वेटा, बरबैंक और स्टार्क अर्लिग्लो अच्छी तरह से अपनाई जाती हैं। कम ठंड के लिए फ्लोर्डसुम, फ्लोर्डेड, शान-ए-पंजाब, शरबती और सन्रेड (नेक्टारिन) यूपी के उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में लोकप्रिय हो गई हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र (1900 मी. समुद्र तल से ऊंचाई), शिमला में जुलाई एल्बर्टा, अर्ली एल्बर्टा, स्नो क्वीन, रेड ग्लोब, शान-ए-पंजाब, सुन्क्रेस्ट, ग्लो हेवन, प्रभात, सिल्वर किंग, इ० सी० 174084, पेरा डीलक्स व इंडिपेंडेंस आदि किस्मों का उत्पादन हो रहा है।

क्षेत्रफल एवं उत्पादन

हिमाचल प्रदेश में आड़ू की बागवानी के तहत वर्ष 2018-19 में क्षेत्रफल 5042 हैक्टर और उत्पादन 7292 मीट्रिक टन था। (स्रोत: हि० प्र० आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट 2018-19)

मृदा एवं जलवायु

मृदा-इसके लिए गहरी, मध्यम से रेतीली मिट्टी व दोमट सर्वोतम है। उपजाऊ रेतीली-दोमट मिट्टी का पीएच मान 5.5 से 7.5 तक और जलभराव की स्थिति से मुक्त पर्णपाती फल बागों की स्थापना के लिए उपयुक्त है।

जलवायु-कई प्रजातियों की तुलना में कम शीत घण्टों वाली प्रजातियों की बागवानी अक्सर भूमध्य जलवायु में की जाती है। औसतन, अधिकांश किस्मों को 600-900 शीत घण्टों तक की जरूरत होती है। गर्मी के महीनों के दौरान आड़ू के फल पक जाते हैं, लेकिन गर्म तापमान वाले क्षेत्रों में आड़ू के फल की अच्छी गुणवत्ता विकसित होती है।

पादप प्रवर्धन

आड़ू आमतौर पर जंगली आड़ू अंकुरित पौध पर टी या चिप-बडिंग द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। फरवरी से मार्च तक ग्राफ्टिंग की जाती है, परन्तु कुछ प्रजातियों जैसे शान-ए-पंजाब को दिसंबर के अंतिम सप्ताह में ही ग्राफ्ट किया जाता है।

मूलवृन्त

आड़ू को आमतौर पर जंगली आड़ू के पौधे, बेर और यहां तक कि खुबानी पर भी ग्राफ्ट किया जाता है। जंगली आड़ू पर स्वस्थ और अधिक उपज देने वाले पौधों का उत्पादन किया जाता है। पेड़ के आकार को नियंत्रित करने के लिए खुबानी रूटस्टॉक्स (बौना) का उपयोग किया जा सकता है। अच्छे समग्र प्रदर्शन के साथ बेली कोल्ड हार्डी सर्वश्रेष्ठ मूलवृन्त के रूप में उपयोग होता है। विश्व में गार्जियन, जी एफ (अमैंडियर), लोवेल और साइबेरियन सी कोल्ड हार्डी आदि मूलवृन्त का इस्तेमाल किया जाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र, शिमला (हि० प्र०) में 'प्रूनस जैपानिका' को आड़ू के बोने मूलवृंत के रूप में अनुमोदित किया गया है।

पौध रोपण

आड़ू के पौधों का रोपण सर्दियों के महीनों में दिसंबर के अंत से मार्च के मध्य तक किया जाता है। रोपण, गड्ढों के केंद्र में किया जाता है (1x1x1 घनमीटर या गोलाकार) और रोपण से एक महीने पहले गड्ढों को तैयार किया जाता है। आड़ू पौध-रोपण दूरी 4.5 से 5 मीटर पर अनुमोदित की गयी है।

पोषण प्रबंधन

आड़ू के पूर्ण विकसित होने वाले पौधे के लिए 700:350:700 ग्राम एन०पी०के० की उर्वरक खुराक की सिफारिश की गई है।

सधाई एवं काँट छांट

आड़ू की आमतौर पर 'ओपन सेंटर' प्रणाली द्वारा कटाई-छंटाई की जाती है। प्रूनिंग व कांट-छांट इस तरह से की जाती है ताकि युवा पेड़ों में 20-25 सेंटीमीटर नई वृद्धि और पुराने पेड़ों में 25-30 सेंटीमीटर भाग हर साल सुरक्षित रहे।

आड़ू के फल

फलों की तुड़ाई एवं उपज

सही समय पर आड़ू के फलों की तुड़ाई के लिए, फलों में उचित रंग विकास को विश्वसनीय मार्गदर्शक माना जाता है। फलों पर गहरे नारंगी रंग का विकास उचित परिपक्वता के साथ जुड़ा हुआ है। यदि फल पकने पर अच्छा स्वाद विकसित करना है तो गुठली का कम से कम 5% भाग भी भूरा होना चाहिए। आड़ू की किस्म एल्बर्टा को जुलाई में पूर्ण फूल खिलने के बाद फल पकने में लगभग 90-95 दिन लगते हैं। अन्य किस्मों में पूर्ण परिपक्वता आने में 100-105 दिन भी लगते हैं।

अध्ययन के दौरान उपरोक्त आड़ू के फलों की वजन सीमा 52.06 से 129.80 ग्राम, फलों की लम्बाई सीमा 36.33 से 61.67 मिमी० तथा चौड़ाई 48.22 से 62.92 मिमी० आंकी गई है। कुल घुलनशील शर्करा की मात्रा 9.46 से 16.34 डिग्री ब्रिक्स और अम्लता 0.24 से 1.1 मिलीलीटर/100 मिलीलीटर पाई गयी है। ■

आम की बहुपयोगिता पर ऐप्स

फल विशेषांक

नीलिमा गर्ग*

आम के फल उत्पादों में सूक्ष्मजीव मुख्यत: फल तथा बर्तन और मशीनरी आदि से आते हैं। अत: तैयार आम उत्पादों की सूक्ष्मजैविक गुणवत्ता प्रसंस्करित फलों, प्रसंस्करण यंत्रों तथा बर्तनों की सफाई पर निर्भर करती है। आम की सतह पर सूक्ष्मजीवों की संख्या, फल के स्वास्थ्य तथा मौसम से प्रभावित होती है। सूखे ठंडे मौसम की अपेक्षा गर्म आर्द्र वातावरण सूक्ष्मजीवों के पनपने में अधिक सहायक होते हैं। स्वस्थ आम में सतही सूक्ष्मजीव बाहरी त्वचा अर्थात छिलके तक सीमित रहते हैं, जबकि चोटग्रस्त अथवा सड़े-गले अस्वस्थ आम में इसकी भारी मात्रा गूदे में भी पनप जाती है। हार्वेस्टर से तोड़े गये आम की तुलना में हाथ से तोड़े गये आम पर अधिक सूक्ष्मजीव पाये गये हैं। अपर्याप्त साफ किये गये फलों, प्रसंस्करण संयंत्रों तथा बर्तनों के छिद्रों में फल पदार्थों के अपशिष्ट लगे रह जाते हैं। इन पर सूक्ष्मजीव तेजी से पनपते हैं तथा प्रसंस्करण के समय फल उत्पाद में मिल जाते हैं। कभी-कभी डिब्बाबंदी के समय डिब्बे अथवा बोतल के ढक्कन में छिद्र रह जाने के कारण हवा अथवा प्रशीतलन जल में उपस्थित सूक्ष्मजीव, उत्पाद में प्रवेश कर सकते हैं। डिब्बे में सरंध्र के कारण अधिकतर जीवाणु ही पनपते हैं किन्तु विकृति आने की अवस्था में इसमें फफूँद तथा यीस्ट भी पनप सकते हैं।

सूक्ष्मजीवों से आम उत्पादों के बचाव के लिये यह आवश्यक है कि सड़े-गले, चोटग्रस्त फल, बाकी फलों से शीघ्रता से अलग किए जायें। फलों की रोगाणुनाशक पदार्थों से धुलाई करने से सूक्ष्मजीवों की संख्या में भारी कमी आ जाती है। जहां तक सम्भव हो स्टेनलेस स्टील के चाकू, बर्तन, गूदा निकालने वाली मशीनें, फल छीलने वाले श्रमिकों के हाथ इत्यादि सूक्ष्मजीव रहित होने चाहिये। फल प्रसंस्करण फैक्टरी में दस्ताने, बालों की जाली तथा गम बूट पहनने अनिवार्य होने चाहिये। पूरी मशीन की हर प्रसंस्करण के उपरान्त नियमित सफाई करनी चाहिये। जहाँ तक सम्भव हो, मशीनों इत्यादि में दरारें, छेद इत्यादि (जिनमें फल पदार्थों के फंसने की आशंका हो) नहीं होने चाहिये। डिब्बाबंदी के समय ढक्कन ठीक से सील हों तथा डिब्बा कहीं से दबा नहीं होना चाहिये। गर्म-गर्म भरे गये डिब्बों को तुरन्त ठंडे पानी में रखना चाहिए जिससे तापरोधी सूक्ष्मजीवों को पनपने का उपयुक्त वातावरण न मिल सके। प्रसंस्करण में उपयोग होने वाला पानी तथा प्रशीतलन जल उच्चकोटि का एवं जीवाणुरहित होना चाहिए। भण्डारण के दौरान डिब्बों को ठंडे, सूखे एवं साफ स्थान पर रखना चाहिए। डिब्बाबन्दी अथवा पैकेटबन्दी के लिए प्रयोग होने वाले पदार्थ भी सूक्ष्मजीवरहित होने चाहिए। प्रसंस्करण प्रक्षेत्र साफ एवं धूलरहित होना चाहिए। प्रसंस्करण के समय निकलने वाले फल अवशेष तथा सड़े-गले फलों का निस्तारण कर देना चाहिए जिससे प्रसंस्करित उत्पादों में संक्रमण न हो जाए।

*प्रभागाध्यक्ष, तुड़ाई उपरांत प्रबंधन प्रभाग,भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, बीकानेर राजस्थान

बहुपयोगी हैं आम अपशिष्ट

हाल के वर्षों में आम प्रसंस्करण के क्षेत्र में काफी वृद्धि हुई है। इस कारणवश प्रमुख समस्या ठोस अपशिष्ट निस्तारण की है। आम के प्रसंस्करणजनित अपशिष्ट मुख्यत: छिलका तथा गुठली हैं, जो कुल फल भार के 40 से 50 प्रतिशत तक होते हैं। अधिक मात्रा में उत्पन्न ये अपशिष्ट प्रदूषण की समस्या को बढ़ाते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इनका बेहतर उपयोग किया जाये।

छिलका

रासायनिक निष्कर्षण द्वारा आम के छिलके से रेशा तथा पैक्टिन प्राप्त किया जा सकता है। शुद्ध अवस्था में यह रेशा भोज्य पदार्थों जैसे बेकिंग-उत्पाद, बाल-आहार तथा भोजन के साथ लिये जाने वाले पेय का रेशा

पेड़ पर लगे रसदार आम

आम उपयोगिता पर दो नए मोबाइल ऐप्स

आम एक ऐसा फल है जो विकास एवं वृद्धि की हर अवस्था में उपयोग में लाया जाता है। कच्चे आम का उपयोग अचार, चटनी, अमचूर, पना, फांकें आदि बनाने में किया जाता है। दूसरी ओर आम फांकें, आम गूदा, रस, अमरस, जैम, मीठी फांकें आदि बनाने में प्रयुक्त होती हैं। भाकृअनुप-केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, बीकानेर, द्वारा आम के प्रसंस्करण, को बढ़ावा देने के लिए दो मोबाइल ऐप विकसित किये गए हैं। कच्चे आम के उत्पाद ऐप में विभिन्न प्रकार के अचार जैसे तेल का अचार, बिना तेल का हींग अचार, हींग का मीठा अचार, आम के लच्छों का मीठा अचार, पना व अमचूर बनाने की विधियां दी गई हैं। पके आम के उत्पाद ऐप में पके आम से गूदा, स्क्वैश, जैम व सीरप में संरक्षित फांकें चटनी तथा आम पापड़ बनाने की विधियां दी गई हैं। यह ऐप दुनियाभर में हिंदी भाषी लोगों द्वारा उपयोग के लिए हिंदी में है। जब ऐप खोला जाता है तो ऑडियो दृष्टिबाधित अथवा अशिक्षित लोगों के लिए भी समान रूप से उपयोगी है। बताई गई विधियों को लंबे समय से संस्थान में मानकीकृत किया गया है। इन ऐप्स को गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड किया जा सकता है

Raw Mango Products & Android Apps on Google Play Play.google.com

Ripe Mango Products & Android Apps on Google Play Play.google.com

मूल्य बढ़ाने में प्रयुक्त होता है। आम के छिलके से प्राप्त उच्च गुणवत्तायुक्त पैक्टिन जैम, जैली, पुडिंग, सलाद, दुग्ध पदार्थो इत्यादि में वांछित गाढ़ापन तथा स्थायित्व लाने के लिये प्रयुक्त होता है। प्रसाधन तथा औषधि निर्माण उद्योग में भी इसका उपयोग करते हैं।

किण्वन विधि की सहायता से आम के छिलके से पैक्टीनेज तथा सैलूलेज एन्जाइम प्राप्त किये जा सकते हैं। इनका फल प्रसंस्करण उद्योग में विशेष रूप से उपयोग है। भारत में लगभग 20 करोड़ रुपये के एन्जाइम का प्रयोग होता है। लेकिन अधिकतर एन्जाइम विदेशों से आयात किये जाते हैं। इसमें भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा खर्च होती है। यदि फल प्रसंस्करण उद्योग द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट से एन्जाइम उत्पन्न कर लिये जाएं तो एन्जाइम की उत्पादन लागत में काफी कमी आयेगी। इससे प्रदूषण की समस्या में कुछ हद तक कमी भी लायी जा सकती है। एन्जाइम निष्कर्षण के उपरान्त बचे हुये अपशिष्ट को प्रोटीनयुक्त खाद्य के तौर पर पशुआहार में भी मिलाया जा सकता है।

आम के छिलके से किण्वीकरण द्वारा साइट्रिक अम्ल उत्पन्न किया जा सकता है। इसे विभिन्न खाद्य-उद्योगों में प्रयोग में लाते हैं। इस छिलके से उत्तम गुणवत्ता का सिरका बनाया जा सकता है जो देखने तथा सुगंध में आम के गूदे से तैयार सिरके के समकक्ष होता है। आम के छिलकों का उपयोग पशु आहार के रूप में भी होता है, किन्तु छिलके में प्रोटीन की मात्रा बहुत कम होती है। इसे विशिष्ट सूक्ष्मजीवों द्वारा वातापेक्षी ठोस किण्वीकरण विधि से पांच गुना तक बढ़ाया जा सकता है। इससे आहार अधिक पौष्टिक हो जाता है। आम के छिलके का प्रयोग खुम्बी उत्पादन में भी किया जा सकता है।

छिलकों को इस्तेमाल करने की सबसे आसान विधि इनसे खाद बनाना है । लेकिन वर्षभर पड़े रहने के उपरान्त भी आम का छिलका पूरी तरह से नहीं सड़ता है। इस प्रक्रिया को तेज करने के लिए यदि आम के छिलकों में गोबर 3:1 के अनुपात में मिलायी जाये तो एक महीने में छिलका सड़ कर उच्च कोटि की खाद में परिवर्तित हो जाता है। आम के छिलके से बायोगैस का उत्पादन भी किया जा सकता है।

गुठली

प्रसंस्करण से प्राप्त गुठली पर आम का कुछ गूदा लगा रह जाता है। इस गूदे से किण्वन द्वारा बेकर-यीस्ट उत्पन्न किया जा सकता है जो बेकिंग उद्योग में अपनी आम युक्त सुगंध के कारण लोकप्रिय हो सकता है। इसके अतिरिक्त इसे सस्ते मक्का अथवा चावल के आटे में मिलाकर मछली अथवा मुर्गी के प्रोटीनयुक्त आहार के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है।

आम की गुठली को तोड़ने से गिरी प्राप्त होती है। आम की गिरी में स्टार्च बहुतायत (58 प्रतिशत) में होता है। इसे रासायनिक निष्कर्षण द्वारा शुद्ध करके आटे के रूप में अथवा औषधि निर्माण में प्रयोग में लाया जाता है। आम की गिरी में तेल काफी मात्रा में पाया गया है। यह तेल खाद्य, सुगन्ध, रबर, प्रसाधन, पेंट, कन्फैक्शनरी, आईसक्रीम, कीटनाशक, कपड़ा, आदि उद्योगों में प्रयुक्त होता है। गिरी से वसा तथा तेल निकालने के पश्चात जो अवशेष बचता है उसे पशुओं के आहार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। गिरी से किण्वन द्वारा एमाइलेज एन्जाइम का उत्पादन भी किया जा सकता है। आम के छिलके व गुठली पर लगे गूदे से बायो-एथेनॉल का उत्पादन करना भी संभव है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनुपयोगी आम अपशिष्ट से कितने उपयोगी उत्पाद प्राप्त किये जा सकते हैं। इस दिशा में शोधकार्य चल रहे हैं। जरूरत इस बात है कि इन परियोजनाओं को फल प्रसंस्करण उद्योग की ओर से भौतिक तथा वित्तीय सहायता प्राप्त हो जिससे इन उपलब्धियों को समस्याग्रस्त स्थानों पर ही जांच कर इनकी व्यवहार्यता को परखा जा सके। ■

करौंदा की बढ़ती मांग

सन्नी शर्मा*, विशाल सिंह राणा*, नीरजा राणा, विजय कुमार*, उमेश शर्मा*****

फल विशेषांक

करौंदा एक सदाबहार कंटीली झाड़ी है जिसमें लाल तथा हरे रंग के आकर्षक फल लगते हैं। यह शुष्क उष्ण कटिबंधीय तथा उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। यह छोटे तथा सीमान्त किसानों के लिए अत्यन्त ही लाभकारी फल है जिसको न्यूनतम प्रबंधन के साथ वर्षा आधारित फसल के रूप में आसानी से लगाया जा सकता है। इसके पौधे को फल के अलावा खेतों, बागों एवं उद्यानों में जीवित बाड़ के लिए भी उपयोग में लाया जाता है। भारत में महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार एवं उत्तर प्रदेश राज्यों में इसकी खेती की जाती है।

करौंदा का औषधीय पौधे के रूप में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इसके विभिन्न भागों का औषधि के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। इसकी जड़ के रस को छाती और गुप्त रोगों के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। यह पेट के कीड़ों के निवारण हेतु भी इस्तेमाल किया जाता है। पत्ती का रस बुखार के उपचार हेतु और पत्तियों का रेशम के कीड़ों के चारे के रूप में प्रयोग होता है। इसकी लकड़ी का प्रयोग चम्मच और कंघा बनाने के लिए किया जाता है।

जलवायु एवं भूमि

कांटायुक्त स्वभाव व सहिष्णु होने के कारण करौंदे की झाड़ियां रेगिस्तानी जलवायु में भली-भांति स्वयं को ढाल लेती हैं। इसी कारण करौंदे को शुष्क जलवायु के एक महत्वपूर्ण पौधे के रूप में शामिल किया गया है। बहुत अधिक ठंड वाले क्षेत्रों को छोड़कर इसे उष्ण/शुष्क/अर्ध शुष्क जलवायु में कहीं भी उगाया जा सकता है। इसे सभी प्रकार के समस्याग्रस्त क्षेत्रों, जैसे- बंजर, ऊसर, बीहड़, खादर, शुष्क/अर्ध शुष्क, कंकरीली/पथरीली जैसी भूमियों में उगाया जा सकता है, परन्तु उपयुक्त जल निकास वाली 6-8 पी.एच. मान वाली बलुई, दोमट भूमि इसकी बागवानी के लिए उत्तम है।

सारणी: करौंदा के पोषक तत्व

पोषक तत्व	मात्रा ; प्रति 100 ग्राम ताजा फल
प्रोटीन	0.39-0.66 ग्राम
वसा	2.57-4.83 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	0.51-2.94 ग्राम
रेशा	0.62-1.81 ग्राम
लोहा	38-39.1 मिली ग्राम
कैल्शियम	21-24.5 मिली ग्राम
फॉस्फोरस	36-38 मिली ग्राम
एस्कॉर्बिक अम्ल: विटामिन सी	35.0 मिली ग्राम
विटामिन ए	1619 आई. यू
ऊर्जा	42.5 किलो कैलोरी

प्रजातियां व किस्में

करौंदे की सबसे प्रचलित प्रजाति कैरिसा कैरान्डास है। इसके अतिरिक्त अन्य मुख्य प्रजातियां कैरिसा ग्रैन्डीफ्लोरा, कैरिसा बाइस्पिनोसा, कैरिसा इड्यूलिस, कैरिसा ओवेटा, कैरिसा स्पाईनेरम, कैरिसा पॉसिनेरिया व कैरिसा सुआविसिमा हैं। करौंदे की दो प्रमुख किस्में गुलाबी लाल तथा गहरी बैंगनी हैं। हाल ही में कुछ नई किस्में जैसे पन्त स्वर्ण, पन्त मनोहर, पन्त सुदर्शन, कोंन बोल्ड, सी. आई. एस. एच. करौंदा 11, थार कमल, मरून एलरड तथा मारू गौरव विकसित हुई हैं।

प्रबन्धन

करौंदा के पौधे मुख्यत: बीज से तैयार किये जाते है। अच्छी तरह पके हुए फलों से जुलाई-अगस्त में बीज निकालकर यथाशीघ्र पौधशाला में बुआई करते हैं। यदि बीजों को भंडारित करना है तो छाया में सुखाकर व 2 ग्राम थीरम प्रति किग्रा. बीज की दर से मिलाकर बोतल में रखना उपयुक्त रहता है। बीजों को अधिक दिनों तक रखने से उनकी अंकुरण क्षमता कम हो जाती है। अत: जितना शीघ्र हो सके, बीज की बुआई कर देनी चाहिए। नर्सरी में बीज जमने के बाद छोटे पौधों की खरपतवार, रोगों व कीटों से रक्षा करनी चाहिए। बीजू पौधे दो वर्ष बाद बाग में रोपने योग्य हो जाते हैं। करौंदा के पौधे गूटी

करौंदा वृक्ष

*फल विज्ञान विभाग, **मूल विज्ञान विभाग, ***वृक्ष सुधार और आनुवंशिक संसाधन विभाग, डॉ यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

रोपण

करौंदे का बाग लगाने के लिए वर्गाकार अथवा आयताकार विधि में 3×3 से 5×5 मीटर की दूरी पर रेखांकन करना चाहिए। बाड़ लगाने के लिये पौधे से पौधे की दूरी को घटाकर 50 सें.मी. कर सकते हैं। रोपण से लगभग एक माह पूर्व 30-40 घन सें.मी. आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए। रोपण से 15 दिनों पूर्व प्रत्येक गड्ढे में 25-30 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद मिलाकर गड्ढे को भूमि की सतह से 15-20 सें.मी. की ऊँचाई तक भर देते हैं। यदि भूमि में कंकड़-पत्थर हों तो रोपाई से पूर्व उन्हें निकाल देना चाहिए। ऊसर भूमि में जिप्सम अथवा पाइराइट मिलाकर रोपण से पूर्व भूमि का पी.एच. मान सुधार देने से बाग स्थापित करने में सफलता मिलती है। रोपण का कार्य जून-जुलाई में किया जाता है।

बागवानों के लिए आय स्रोत

अथवा स्टूल दाब लगाकर भी तैयार किये जाते हैं। इन विधियों में हार्मोन का प्रयोग करना आवश्यक है। गूटी बंधन का अच्छा समय जुलाई है। गूटी हेतु इंडोल ब्यूटरिक अम्ल 5000 पी.पी.एम. व स्टूल दाब हेतु 1000 पी.पी.एम सांद्रता के लेनोलिन लेप के साथ मिलाकर प्रयोग करना लाभकारी पाया गया है।

कांट-छांट

करौंदा के पौधे झाड़ी के रूप में बढ़ते है। अत: इसमें विशेष सधाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। आरंभिक वर्षो में इच्छित आकार देने के उद्देश्य से हल्की कांट-छांट करते हैं ताकि पौधे मजबूत हों व बगीचे में कर्षण क्रियाएं आसानी से की जा सकें। रोपण के समय प्रत्येक पौधे को सहारा देते हैं जिससे वे सीधे बढ़ें। बाद के वर्षों में करौंदे के पौधों में सामान्यता कांट-छांट की आवश्यकता नहीं पड़ती है परन्तु सघन, सूखी व रोगग्रस्त शाखाओं को निकालते रहने से पौधे के अंदरूनी भागों पर सूर्य का प्रकाश पंहुचता रहता है जो नई कलियों के बनने में सहायक होता है। पुरानी झाड़ियों का पुनरूद्धार करने के उद्देश्य से शीर्षकर्तन कर दिया जाता है। कांट-छांट के लिए अक्टूबर माह का समय उपयुक्त होता है।

फलों की तुड़ाई एवं भंडारण

बीज द्वारा प्रवर्धित पौधे रोपण के तीसरे वर्ष फल देने लगते हैं। करौंदा का पुष्पण मार्च माह में होता है। पुष्प आने के 100-120 दिनों बाद जुलाई-अगस्त माह में फल परिपक्व हो जाते हैं। एक पौधे से औसतन 3-5 किलो ग्राम फल प्राप्त होते हैं। परिपक्व अवस्था में तोड़े गए फलों का एक सप्ताह तक भंडारण किया जा सकता है। रासायनिक उपचार जैसे कि 200 पी. पी. एम. सल्फर डाई आक्साइड के घोल से उपचारित फलों को 6 महीने तक भी भंडारित किया जा सकता है।

करौंदे के बगीचे लगाने के लिए मुख्यत: 3×3, 4×4 एवं 5×5 मीटर की दूरी पर पौधों का रोपण किया जाता है। इस प्रकार प्रति हैक्टर 4×4 मीटर की दूरी अपनाने पर 625 करौंदे के पौधे लगाये जाते हैं। इसकी समय पर काट-छांट करने व पानी, खाद, उर्वरक की सही मात्रा मिलने पर प्रति पौधा लगाने के दो साल बाद 25-30 किलो ग्राम फल देता है। इस प्रकार कुल खर्चा निकालकर करौंदे के बगीचे से प्रतिवर्ष लगभग 85500 से 90000 रुपये का शुद्ध लाभ मिलता है। ■

तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन

फल, लगने के लगभग 2-3 माह बाद (जुलाई-सितम्बर) परिपक्व होकर तोड़ने योग्य हो जाते हैं। रंग बदलना परिपक्वता की निशानी है। तुड़ाई दो-तीन चरणों में की जाती है। करौंदा की एक पूर्ण विकसित झाड़ी से लगभग 30-35 कि.ग्रा. फल प्राप्त हो जाते हैं। स्वस्थ फलों को बड़े, मध्यम व छोटे आकार की श्रेणियों में बांट देना चाहिए। कमरे के सामान्य तापमान पर करौंदा के फलों को एक सप्ताह तक रख सकते हैं। इन फलों को अधिक समय तक भंडारित नहीं कर सकते, इसलिए प्रसंस्करित उत्पाद बनाने की सम्भावनायें काफी कम हैं। इसके कच्चे एवं पके फलों से विभिन्न उत्पाद जैसे कि जैम, जैली, परासरणी निर्जलीकृत करौंदा, अचार, चटनी तथा स्क्वैश आदि बनाये जाते हैं।

आकर्षक करौंदा फल की भरपूर उपज

गार्सिनिया है पोषक फल

प्रकाश चंद्र त्रिपाठी*

फल विशेषांक

गार्सिनिया फल वाले पौधों की महत्वपूर्ण प्रजातियों का एक वंश है। इसमें उष्णकटिबंधीय एशिया और अफ्रीका में पाई जाने वाली लगभग 200 प्रजातियां शामिल हैं। इसकी पैंतीस प्रजातियाँ भारत में पाई जाती हैं। गार्सिनिया वंश के फल, खाने योग्य मसाला, खाना पकाने का मक्खन, रंग या औषधीय प्रयोजनों, सोने और चांदी जैसी धातु की सतहों को चमकाने, इत्यादि के लिए प्रयोग किये जाते हैं। भारत में इस वंश की महत्वपूर्ण प्रजातियाँ मैंगोस्टीन (गार्सिनिया मैंगोस्टीना), कोकम (गार्सिनिया इंडिका), मालाबार इमली (गार्सिनिया गमीगुट्टा), पीला मैंगोस्टीन (गार्सिनिया जैंथोकाइमस) आदि हैं।

मैंगोस्टीन दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों का एक उष्णकटिबंधीय सदाबहार पेड़ है। उत्कृष्ट स्वाद, कोमलता और गूदे के स्वाद के कारण इसे दुनिया का सबसे अच्छा फल या 'फलों की रानी' कहा जाता है। यह मुख्य रूप से दक्षिण-पूर्व एशिया और उष्णकटिबंधीय दक्षिण अमेरिकी देशों में उगाया जाता है। भारत में, इसे बहुत पहले लाया गया लेकिन विशिष्ट जलवायुविक आवश्यकता के कारण इसे केरल, तमिलनाडु और कर्नाटक के आर्द्र

*प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी), फल फसल प्रभाग, भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान हेसरघट्टा लेक पोस्ट, बेंगलुरु

गार्सिनिया का तरुण पौधा

गार्सिनिया मैंगोस्टीन का पुष्प

गार्सिनिया अपरिपक्व फल

उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में बहुत सीमित मात्रा में उगाया जाता है। गार्सिनिया मैंगोस्टीन धीमी गति से बढ़ने वाला, सीधा और मध्यम आकार का पेड़ है। यह भूमध्यरेखीय जलवायु में उगता है। भारत में इसकी कोई अनुशंसित किस्म नहीं है। इसे बीज और ग्राफ्टिंग द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है। पौधरोपण 6x6 मीटर की दूरी पर किया जाता है। ग्राफ्टेड पौधे 7-8 वर्षों के बाद फूलने लगते हैं। पेड़ पर मार्च-अप्रैल में फूल आते हैं और फूल आकर्षक गुलाबी रंग के होते हैं। पुष्पण के 120-125 दिनों के बाद फल पक जाते हैं। दक्षिण भारत में फल जुलाई-अगस्त के महीने में पकते हैं। एक वयस्क पेड़ 40-60 किलोग्राम फल देता है। फल पकने पर गहरे-बैंगनी से लाल-बैंगनी हो जाते हैं। फलों का गूदा सफेद, रसदार, मुलायम और बहुत मीठा होता है। गूदे में विशिष्ट स्वाद वाली मिठास होती है। फलों को कमरे के तापमान पर 2-3 सप्ताह तक संग्रहीत किया जा सकता है। इसे मुख्य रूप से ताजे फल के रूप में उपयोग किया जाता है लेकिन प्रसंस्करित उत्पाद जैसे जेली, पेस्ट, सिरप और डिब्बाबंद फल भी तैयार किए जाते हैं।

कोकम (गार्सिनिया इंडिका)

कोकम, भारत में पश्चिमी घाट का मूल पेड़ है। महाराष्ट्र, कर्नाटक और गोवा के पश्चिमी घाटों में यह सदाबहार और अर्ध-सदाबहार जंगलों में या घर के बगीचे में पाया जाता है। इसके पके फल चमकीले लाल, गोलाकार होते हैं। इनका छिलका मोटा और लाल रंग का होता है। गूदा सफेद एवं

पके फल

खट्टा होता है और इसमें 5 से 8 बीज होते हैं। कोकम का प्रयोग आमतौर पर ताजे फल के रूप में नहीं किया जाता है। इसका उपयोग स्क्वैश, सिरप बनाने के लिए किया जाता है। पूरे पश्चिमी घाट क्षेत्र में लंबे समय से विभिन्न व्यंजनों में खटाई के रूप में इसका उपयोग किया जाता है। कोकम में एंथोसायनिन, फैटी एसिड, हाइड्रोक्सीसिट्रिक एसिड (एचसीए) और गार्सिनॉल होते हैं। एंथोसायनिन अपने एंटीऑक्सिडेंट, एंटी-इंफ्लेमेटरी और एंटी-कार्सिनोजेनिक गतिविधि के लिए जाने जाते हैं। कोकम मोटापारोधी यौगिक,

कोकम मक्खन

कोकम शरबत

हाइड्रोक्सीसिट्रिक एसिड (एचसीए) से समृद्ध है। इससे बहुत सारे मोटापे कम करने के उत्पाद तैयार किए जा रहे हैं। इसकी दो उन्नत किस्में यथा- कोंकण-अमृत और कोंकण-हातिस डॉ. बीएसकेकेवी, ढापोली द्वारा जारी की गई हैं। कोकम को बीज, ग्राफ्टिंग और जड़ से निकलने वाले प्ररोहों द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है। ग्राफ्टेड पौधे

कोकम के विभिन्न उत्पाद

कोकम सिरप, नमकीन कोकम सिरप और सूखे छिलके जैसे उत्पाद पारंपरिक रूप से फलों के छिलके से तैयार किए जाते हैं। सूखा छिलका धूप में सुखाकर तैयार किया जाता है। महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र और कर्नाटक के तटीय क्षेत्रों में इसके बीजों से तेल (मक्खन) निकाला जाता है। कोकम मक्खन एक ठोस, स्थिर मक्खन है। इसका उपयोग सौंदर्य प्रसाधन, बार साबुन और त्वचा लोशन तैयार करने में किया जाता है)।

कोकम के फल

मालबारी इमली के उपयोग

फलों से सूखे छिलके, पाउडर, सिरका, दवा इत्यादि बनाये जाते हैं। सूखे छिलके की मलनाड और केरल में बहुत मांग है और रु 300-800 प्रति किग्रा. पर बेचे जाते हैं। मलनाड में फलों के सिरके की भी बहुत मांग है और यह रु 800-1600 प्रति लीटर के हिसाब से बिकता है।

मालाबर इमली के कच्चे फलों से लदी डाली

मालाबर इमली के पके फल

फलों के सुखाये छिलके

मालाबर इमली का सिरका

बीजों से तैयार मक्खन

कोकम के फलों से लदी डाली

में रोपण के 3-4 साल बाद फल लगते हैं। कोकम में दिसंबर से फरवरी के दौरान पर फूल आता है। इसके फल अप्रैल से मई के महीने में तैयार होते हैं। आमतौर पर एक 15 साल पुराना 30-50 किलो फल पैदा करता है। सामान्य तापमान पर कोकम के फलों को 4-5 दिन तक रखा जा सकता है।

मालाबार इमली (गार्सिनिया गुम्मीगुट्टा)

मालाबार इमली (स्थानीय नाम- काचमपुली/कडमपुली) भारत व म्यांमार का मूल पौधा है। यह व्यापक रूप से कोंकण से केरल तक पश्चिमी घाट में पाया जाता है। इसके फल बहुत अम्लीय होते हैं। इसलिए इन्हें सुखाया जाता है। केरल और कर्नाटक में इमली या नींबू के स्थान पर पारंपरिक भोजन में मसाले के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके बीजों मे तेल पाया जाता है, जो खाने योग्य होता है। इसे मलहम, साबुन, कन्फेक्शनरी, सौंदर्य प्रसाधन और पाक प्रयोजनों के लिए भी उपयोग किया जाता है। तने से निकाले गए गोंद का उपयोग वार्निश बनाने के लिए किया जाता है। फल हाइड्रॉक्सी साइट्रिक एसिड, गार्सिनॉल, जैंथोन आदि से भरपूर होते हैं। इनका उपयोग बहुत सारे पोषण के साथ-साथ फार्मास्युटिकल उद्योगों में भी किया जाता है। भारत में मालाबार इमली के लगभग कोई बागान नहीं हैं। पेड़ जंगली क्षेत्रों और पिछवाड़े में पाए जा सकते हैं। फलों को जंगलों या घर के बगीचों से एकत्र किया जाता है और बाजार में बेचा जाता है। यह अनुमान है, कि प्रतिवर्ष लगभग 2500 टन सूखा छिलका जंगल और अन्य क्षेत्रों से एकत्र किया जाता है। अभी तक भारत में इसकी कोई भी किस्म जारी नहीं की गई है, हालांकि कुछ उन्नत लाइनों की पहचान की गई है। इसको बीज, ग्राफ्टिंग और जड़ से निकलने वाले प्ररोहों द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है। कलमित पौधे 5-6 वर्ष में फलना शुरू कर देते हैं। फूल मार्च-अप्रैल के महीने में लगते हैं और फल जुलाई-अगस्त तक पक जाते हैं। परिपक्वता के समय फलों का रंग हरे से चमकीले पीले रंग में बदल जाता है। आमतौर पर एक 15 साल पुराना पौधा प्रति पौधा, 30-40 किलो फल देता है।

पीले मैंगोस्टीन का बागान

पीला मैंगोस्टीन

पीला मैंगोस्टीन भारत व दक्षिण-पूर्वी एशिया का मूल पौधा है। भारत में यह पश्चिमी घाट की निचली पहाड़ियों में कोंकण से केरल तक, असोम, बंगाल, ओडिशा व्यापक रूप से उगता पाया जाता है। यह आकर्षक मुकुट वाला बारहमासी पेड़ है। फल में कई फाइटोकैमिकल्स जैसे जैंथोन, फ्लेवोनोइड्स, सैपोनिन, टैनिन, एल्कलॉइड,

पीले मैंगोस्टीन के कच्चे फल

पीले मैंगोस्टीन के पके फल

पीले मैंगोस्टीन का तरुण वृक्ष

लिपिड, बेंजोफेनोन और बिफ्लेवोनोइड्स होते हैं। ये यौगिक पेट के कैंसर और स्तन-कैंसर की रोकथाम में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। भारत में पीले मैंगोस्टीन का लगभग कोई बागान नहीं है। यह ज्यादातर पिछवाड़े के बगीचे में अर्द्ध-जंगली स्थिति के रूप में उगाया जाता है। पौधों को बीज, कटिंग, ग्राफ्टिंग द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है। रोपण के 7 से 8 वर्ष बाद पौधे फलने लगते है। पुष्पण मई महीने में से अगस्त-सितंबर तक होता है। फल नवंबर-मार्च के महीनों में पकते हैं। परिपक्वता के समय फलों का रंग हरे से चमकीले पीले रंग में बदल जाता है। एक 15 साल का वृक्ष 20-30 किलो फल देता है। फल खट्टे होते हैं और ताजे फलों के उद्देश्य से ज्यादा पसंद नहीं किए जाते हैं। फलों को जैम, चटनी, करी, स्क्वैश, सूखे फ्लेक्स आदि में प्रसंस्करित किया जाता है। फलों से एक प्रकार का ठंडा पेय तैयार किया जाता है। मलेशिया में इसे करी में इमली के विकल्प के रूप में फल का उपयोग किया जाता है।

पश्चिमी घाट और पूर्वोत्तर क्षेत्रों में भविष्य की फसलों के रूप में इन प्रजातियों में जबरदस्त संभावनाएं हैं। इन प्रजातियों की फार्मास्युटिकल और प्रसंस्करण उद्योगों में काफी मांग हैं। इन प्रजातियों की उत्पादन तकनीकों पर बहुत सीमित शोध-कार्य किए गए हैं। इनमें और तेजी लाने की आवश्यकता है। ■

लेखकों से अनुरोध

आज सूचना प्रौद्योगिकी के बदते हुए कदमों को हमारे पाठक और लेखक दोनों ने पहचाना है। पाठकगण लेखकों से सीधी बात कर सकें। इसलिए हम चाहते हैं कि सभी लेखक अपने लेख के साथ अपना ई-मेल पता तथा मोबाइल नम्बर अवश्य दें।

-संपादक

परिनगरीय क्षेत्रों हेतु उपयुक्त फल

राम रोशन शर्मा*

फल विशेषांक

परिनगरीय औद्यानिकी की परिकल्पना विकसित देशों में तो एक पुरानी अवधारणा है, परन्तु हमारे देश में इस विषय पर चर्चा हाल ही के वर्षों में शुरू हुई है। इस परिकल्पना के अंतर्गत औद्यानिकी फसलों जैसे फलों, सब्जियों एवं अलंकृत किस्मों के पौधों की बागवानी शहरों व कस्बों के नजदीकी क्षेत्रों में की जाती है। वैसे मिट्टी, जलवायु एवं अन्य कारकों के अनुरूप लगभग प्रत्येक औद्यानिक फसल को परिनगरीय क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। हमें तुड़ाई उपरांत शीघ्र नष्ट होने वाली फसलों की खेती ही करनी चाहिए जिन्हें हम अन्य भागों में उगा तो सकते हैं परंतु उन्हें बेचने हेतु शीघ्र बाजार नहीं मिलता है। इससे शहरी क्षेत्रों के उपभोक्ता को ताजी व पौष्टिक सामग्री मिल जाती है। इसके अतिरिक्त हमारे देश में अधिकतर कल-कारखाने भी शहरों में ही हैं, उन्हें भी सामग्री लगातार मिलती रहती है। परिनगरीय औद्यानिकी अपनाने से अनपढ़ महिलाओं व पढ़े-लिखे नौजवानों को रोजगार मिलता है जिससे लोगों का सामाजिक व आर्थिक विकास होता है।

विभिन्न औद्यानिकी फसलों में फलों का विशेष महत्व है क्योंकि इनमें पोषक तत्व व विटामिन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। ये कई रोगों से रक्षा करते हैं। परिनगरीय क्षेत्रों में वैसे तो मिट्टी, जलवायु व अन्य बाह्य कारकों के अनुसार कई फलदार फसलों को उगाया जा सकता है, परंतु निम्नलिखित फल ऐसी बागवानी हेतु सर्वोचित हैं। इस बागवानी के बारे में संक्षिप्त ब्यौरा नीचे दिया जा रहा है:

*खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

स्ट्रॉबेरी

स्ट्रॉबेरी एक ऐसी फलदार फसल है जो सबसे कम समय में फल देती है। आजकल स्ट्रॉबेरी की बागवानी का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और परिनगरीय क्षेत्रों के लिए यह बहुत ही महत्वपूर्ण फल साबित हो सकता है। देश के अन्य भागों में इसको किसान पैदा तो कर लेते हैं लेकिन उन्हें बाजार नहीं मिल पाते। परंतु महानगरों के समीप रहने वाले किसानों को मार्केटिंग की कोई समस्या नहीं होती है। मार्केटिंग की स्ट्रॉबेरी में महत्ता इसलिए भी अधिक है क्योंकि यह बहुत ही नाजुक फल है। यह एक शाकीय

स्ट्रॉबेरी

पौधा है जिसकी जड़ें बहुत ही छोटी एवं उथली (जमीन की ऊपरी सतह) होती हैं। अतः इसे पानी की बार-बार परंतु थोड़ी मात्रा

में आवश्यकता होती है। वैसे तो स्ट्रॉबेरी की कई किस्में हैं लेकिन चैंडलर, पजारो, फर्न एवं स्वीट चार्ली आदि किस्में इन क्षेत्रों हेतु उपयुक्त हैं। स्ट्रॉबेरी के पौधों का प्रवर्धन भूस्तारी द्वारा होता है जो पहाड़ों में ही पैदा होते हैं। पौधों की रोपाई अक्टूबर के अंत में 25 से 30 सेंमी. की दूरी पर ऊंची क्यारियों में की जाती है। क्यारियां मनचाही आकार की हो सकती हैं। परंतु उनकी ऊंचाई 15 सेंमी. से अधिक नहीं होनी चाहिए। सर्दियों में यदि क्यारियों पर काली पॉलीथीन (700 गेज) का तम्बू लगा दें तो पौधों की बढ़वार अच्छी होती है।

स्ट्रॉबेरी के फल फरवरी में आना शुरू हो जाते हैं और अप्रैल के शुरू तक खत्म हो जाते हैं। यदि फलों का संपर्क मिट्टी से बना रहे तो उनमें कोई पलवार (मल्च) जैसे सूखी घास, पुआल या पॉलीथीन आदि बिछा दें। फलों को तोड़कर उन्हें विशेष प्रकार के प्लास्टिक के डिब्बों में पैक किया जाता है। ध्यान रहे कि 200-250 ग्राम फल ही प्रत्येक डिब्बे में पैक किए जाने चाहिए तथा उन्हें तुरंत बाजार में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। स्ट्रॉबेरी को वैसे तो छोटे-मोटे बहुत रोग व कीट हानि पहुंचाते हैं परंतु कुछ पक्षी जैसे चिड़िया, मोर, तोता आदि सर्वाधिक हानि पहुंचाते हैं। इनसे बचने के लिए पौधों की क्यारियों के ऊपर नायलॉन का जाल लगाना ठीक रहता है।

पपीता

पपीता भी एक शाकीय पौधा है। पपीते के कच्चे फल, सब्जी एवं पके हुए ताजे फल खाने हेतु प्रयोग में लाए जाते हैं। कच्चे फलों के दूध से पपेन भी तैयार किया जाता है। पपीते की वैसे तो अनेक किस्में विकसित की गई हैं लेकिन पूसा नन्हा, पूसा डवार्फ एवं पूसा डिलिशियस एवं को. -1, को. -7 आदि किस्में किसानों में प्रचलित हैं। पपीते में नर व मादा फूल अलग-अलग पौधों पर आते हैं। प्रारंभिक अवस्था में यह पता लगाना कठिन होता है कि लगाए गए पौधों में से कौन सा नर होगा व कौन सा मादा। अत: प्रत्येक गड्ढे मे 2-3 एकलिंगाश्रयी किस्में (पूसा ड्वार्फ, पूसा नन्हा आदि) के पौधे लगाएं और फूल आने पर नर पौधों को उखाड़ दें। परंतु परागण के लिए बाग में कम से कम 10 प्रतिशत नर पौधों की आवश्यकता होती है। ध्यान रहे कि नर पौधों के फूल, लंबी लटकी हुई शाखाओं के रूप में आते हैं। उभयलिंगाश्रयी किस्मों (पूसा मजेस्टी, पूसा डिलिशियस आदि) का प्रत्येक गड्ढे में केवल एक पौधा ही लगाएं।

पपीता

पपीते के पौधों को 1.5 से 2.0 मीटर की दूरी पर लगाएं। इन्हें क्यारियों की मेड़ों पर भी लगाया जा सकता है। पौधों के समीप पानी के निकास का उचित प्रबंध होना चाहिए नहीं तो उनमें तना गलन व सड़न रोग लग जाता है। पौधों के तने के चारों ओर थोड़ी मिट्टी चढ़ाने से उन्हें इस रोग से बचाया जा सकता है। ये पौधे बहुत नाजुक होते हैं अत: जाड़ों में पाले से एवं गर्मी में लू से उनकी सुरक्षा बहुत ही आवश्यक है। पौधे लगाने के साल भर बाद ही फल लगना शुरू हो जाते हैं और एक बार लगाए गए पौधे से 2 से 3 साल तक फल लिए जा सकते हैं। पपेन तैयार करने के लिए 90-100 दिन के फलों पर तेज ब्लेड से 3-4 दिनों के अंतराल पर 4-5 चीरे दिए जाते हैं जिससे सफेद दूध निकलता है। इस दूध को एल्यूमिनियम की ट्रे में इकट्ठा कर सुखाया जाता है। बाद में सूखे पाउडर को सीलबंद डिब्बों या प्लास्टिक की थैलियों में पैक किया जाता है।

फालसा

फालसा एक अद्भुत एवं सहिष्णु फल है। इसके फल आकर्षक जामुनी रंग व गुणों से भरपूर परंतु अत्यंत नाजुक होते हैं। इसके फल अधिकतर ताजे ही खाए जाते हैं परंतु फलों का जूस भी अत्यंत स्वादिष्ट होता है। नाजुक फल होने के कारण यह फल भी परिनगरीय क्षेत्रों हेतु अति उपयुक्त है। इसकी कोई प्रचलित किस्म नहीं है। इसके बाग लगाने के लिए दिसंबर-जनवरी के महीने उपयुक्त हैं। बाग लगाने के लिए पौधे से पौधे की दूरी 2 से 3 मीटर रखी जानी चाहिए, क्योंकि पौधे

फालसा

में फल मुख्यत: नई पत्तियों के अग्रिम प्ररोहों में आते हैं। अत: प्रूनिंग का फालसे में खास महत्व है। प्रूनिंग (काट-छांट) फलों की तुड़ाई के बाद जुलाई-अगस्त में की जाती है। फल अत्यंत नाजुक होने के कारण उन्हें तोड़ने के बाद छोटी-छोटी टोकरियों में रखकर बाजार में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए।

अनन्नास

अनन्नास को भी भारत के कई शहरों के निकटवर्ती क्षेत्रों में लगाया जा सकता है। वैसे तो इसकी कई प्रजातियां हैं परंतु 'क्यू' व 'क्वीन' ही किसानों में अधिक प्रचलित हैं। परिनगरीय क्षेत्रों में इसकी सघन बागवानी की जानी चाहिए। अत: पौधों का 25x30x60 सेंमी. दूरी पर ही रोपण करें। इससे प्रति हैक्टर लगभग 60,000 पौधे लग सकते हैं, जिनसे 100 टन के लगभग फल प्राप्त हो सकते हैं। फलों को ताजा खाया जाता है या इन्हें तुरंत जैम, जैली, जूस आदि बनाने वाली फैक्ट्रियों में भी भेजा जा सकता है।

अनन्नास

वैसे तो अनन्नास की बागवानी में कोई खास समस्या नहीं होती परंतु कभी-कभी एक साथ लगाए गए पौधों में एक साथ फूल नहीं आते। इस समस्या के हल हेतु किसानों को पौधों में फूल आने से पहले रात में 8 बजे के बाद नेफ्थेलिन एसिटिक अम्ल (25 पीपीएम) या प्रति पौधा 2 ग्राम कैल्शियम कार्बाइड का प्रयोग करना चाहिए।

आंवला

आजकल आंवले की बाजार में काफी मांग है। इसके फलों से मुरब्बा, अचार, तेल एवं स्वादिष्ट चूर्ण आदि कई मूल्यवर्धित उत्पाद बनाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त आंवला उन क्षेत्रों में अत्यधिक सफल है जहां अन्य फल मिट्टी में अधिक लवण होने के कारण नहीं उग पाते। आंवले की उन्नत किस्मों में बनारसी, चक्कैया, कृष्णा, कंचन एन.ए.-7, एन.ए.-8 व एन. ए. -9 हैं जिन्हें 8 से 10

आंवला

मीटर की दूरी पर लगाया जा सकता है। क्योंकि आंवले में स्व:निषेचन की समस्या है। अत: हमेशा उचित परागण हेतु बाग में 2-3 किस्में अवश्य लगाएं। बाग लगाने का उचित समय दिसंबर-जनवरी है, परंतु जुलाई-अगस्त में भी बाग लगा सकते हैं।

आंवले में वैसे तो कोई प्रमुख बीमारी व कीट नहीं है परंतु 'नेक्रोसिस' विकार बहुत हानि पहुंचाता है जिसमें फल अंदर से काले पड़ने के बाद सड़कर नीचे गिर जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए बोरेक्स (0.6 प्रतिशत) का छिड़काव लाभकारी रहता है।

अंगूर

अंगूर के फल भी अति नाजुक होते हैं तथा इसके पौधे अन्य फलों की अपेक्षा लवणों की अधिकता को कुछ हद तक सह लेते हैं। अत: यह फल भी परिनगरीय क्षेत्रों हेतु सही है। नवरंग एवं पूसा उर्वशी किस्मों को इन क्षेत्रों में लगाया जा सकता है।

अंगूर के प्रवर्धन का सबसे सरल एवं आसान तरीका है कटिंग (कलम द्वारा)। कलमों (25-50 सेंमी.) को जनवरी के महीने में काट-छांट से प्राप्त लकड़ी से तैयार किया जाता है। यही महीना अंगूर के बाग लगाने के लिए भी सर्वोत्तम है। बाग लगाने की दूरी मुख्यत: किस्म, मिट्टी के प्रकार एवं ट्रेलिंग (सधाई) की विधि पर निर्भर करती है। जैसे शीर्ष सधाई की विधि में 2 से 3 मीटर, टेलिफोन विधि में 2 से 3 मीटर बॉबर या पंडाल विधि में 3 से 4 मीटर दूरी उचित रहती है। वैसे तो सधाई की विधियों का अपना-अपना महत्व है, परंतु पंडाल विधि किसानों के हित में रहती है। फूल के बाद एवं पकने से पहले अंगूर में पानी साप्ताहिक अंतराल पर देना चाहिए। परंतु जैसे ही फलों में रंग आने लगे, सिंचाई तुरंत बंद कर देनी चाहिए। इस समय सिंचाई करने से फलों की मिठास एवं गुणवता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। फलों को मीठा व बीज रहित करनें के लिए फूल आने के समय जिब्रेलिक एसिड (50 पीपीएम) का छिड़काव करें।

अंगूर

उत्तरी भारत में अंगूर को कोई खास कीट व बीमारी प्रभावित नहीं करती। परंतु चिड़िया इसकी सबसे बड़ी दुश्मन है। अत: फलों के पकने के समय उन्हें हरी मखमल की थैलियों से ढक देना चाहिए। वैसे तो अंगूर के फलों को ताजा ही खाया जाता है परंतु इससे किशमिश, मुनक्का, शरबत, मदिरा आदि बहुमूल्य पदार्थ बनाए जा सकते हैं।

कीवी फल

अन्य फलों की अपेक्षा कीवी फल हमारे देश के लिए एक नया फल है। परंतु इसकी बागवानी अन्य फलों की अपेक्षाकृत लाभप्रद होने के कारण यह फल भारत के कई पहाड़ी राज्यों में काफी प्रचलित हो रहा है। लगता है कि विशिष्ट गुणों के कारण यह आने वाले कुछ वर्षो में यह फल अत्यंत लोकप्रिय हो जाएगा। कीवी फ्रूट एक पर्णपाती, बिना रोएं का चीकू जैसा दिखने वाला फल है।

कीवी के फल अन्य फलों की तुलना में काफी पौष्टिक व स्वादिष्ट होते हैं। फलों का खट्टा-मीठा स्वाद लगभग हर किसी को आकर्षित करता है। कीवी के पके फल में लगभग सभी खनिज लवण पाए जाते हैं। विभिन्न प्रकार के विटामिन में, विटामिन 'सी' व विटामिन 'ए' की अच्छी मात्रा पाई जाती है। कीवी के फलों के रोयों को हटाकर अक्सर ताजा ही खाया जाता है।

हांलाकि कीवी शीतोष्ण जलवायु का फल है परंतु जलवायु की कई दशाओं में भी इसे सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। हल्के उपोष्ण एवं गर्म शीतोष्ण जलवायु वाले वे क्षेत्र, जिनकी समुद्र तल से उंचाई 900 से 1,800 मीटर हो, वहां कीवी की बागवानी की जा सकती है। कीवी की चुनिंदा लोकप्रिय किस्मों के अंतर्गत विश्व में कीवी का लगभग 90-95 प्रतिशत क्षेत्रफल आता है।

कीवी को कई विधियों द्वारा प्रवर्धित कर सकते हैं, परंतु कलमों द्वारा प्रवर्धन न केवल एक सस्ती व आसान विधि है अपितु सबसे उपयुक्त विधि भी है। प्रवर्धन हेतु तने की कई प्रकार की कलमों जैसे कोमल काष्ठ, अर्धपकी काष्ठ या सख्त काष्ठ कलमों को प्रयोग में लाया जाता है, परंतु सख्त काष्ठ तने की कलमें सबसे उपयुक्त पाई गई हैं।

कीवी

कीवी की व्यावसायिक बागवानी हेतु चौड़े व थोड़े ढलुआ खेत अच्छे रहते हैं। बहुत ढलुआ खेत ठीक नहीं रहते क्योंकि सधाई हेतु 'टी टेलिस' ढांचा तैयार करने में बहुत असुविधा होती है। कीवी हेतु रोपण दूरी कई बातों जैसे जलवायु, मिट्टी के प्रकार, किस्म-विशेष व सधाई की विधि आदि पर निर्भर करती है। उदाहरणत: हेवर्ड किस्म कम ओजस्वी है अत: रोपण दूरी कम (5 x 3 मीटर) रखी जाती है जबकि ओजस्वी किस्मों हेतु रोपण दूरी अधिक (6 x 4मीटर) रखी जाती है।

कीवी फल एकलिंगाश्रयी होने के कारण, बाग लगाने से पहले नर व मादा किस्मों के चुनाव, नर एवं मादा पौधों का अनुपात एवं लगाने के तरीके पर गौर कर लें। साधारणत: नर व मादा में यह अनुपात 1:6, 1:8 और 1:9 रखा जाता है। ■

साभार:-पूसा सुरभि, अक्तू 2020 से मार्च 2021

चमत्कारी फल है सी-बकथॉर्न

कुलदीप कुमार शुक्ला*, **सम्पूर्णा नन्द सिंह****, **लवकुश पाण्डेय*****,
जितेन्द्र कुमार शुक्ला***** और **कुलदीप*******

फल विशेषांक

सी-बकथॉर्न एक चमत्कारी, अमृत तुल्य आयुर्वेदिक फल है। यह एक झाड़ी होती है जो नारंगी-पीले रंग के खाने योग्य बेरों का उत्पादन करती है। यह बहुत ऊंचाई पर उत्पन्न होने वाला एक पादप है। इसे हिमालयन बेरी भी कहते हैं। औषधि बनाने के लिए इसकी पत्तियों, फूलों और फलों का उपयोग किया जाता है। यह पौधा मुख्य रूप से हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के ऊंचाई वाले पहाड़ी इलाकों में पाया जाता है। सी-बकथॉर्न बेरी को वंडर बेरी, लेह बेरी और लद्दाख गोल्ड के नाम से भी जाना जाता है। इस फल में ऐसे पोषक तत्व पाए जाते हैं जो बाकी फलों और सब्जियों में नहीं मिलते हैं। इसमें प्रो-विटामिन जैसे ए, बी-2 और सी के अलावा ओमेगा ऑयल भी होता है। यह फल -43 डिग्री तापमान से लेकर +40 डिग्री के तापमान पर विकास कर लेता है। इसी अनोखे गुण से हम इसे ठंडे रेगिस्तान का फल कहते हैं। यह पर्यावरण में नाइट्रोजन गैस सन्तुलन को स्थिर रखता है और पहाड़ी क्षेत्र में भूमि क्षरण को रोकता है।

सी-बकथॉर्न एक ऐसा आयुर्वेदिक फल है जिसमें हमारे शरीर की हर जरूरी पोषक तत्व की भरपूर मात्रा होती है; जैसे कि ओमेगा फैटी एसिड 3, 6, 7 और 9 आदि। इसमें पर्याप्त मात्रा में एंटीऑक्सीडेंट्स पाया जाता है। इसके अलावा इसमें विटामिन

सी-बकथॉर्न ड्राई बेरीज

*उड़ीसा कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय भुबनेश्वर (ओडिशा);**गोविंद बल्लभ पंत कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंत नगर (उत्तराखंड);***आचार्य नरेंद्र देव कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश);****चन्द्रशेखर आजाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर(उत्तर प्रदेश);*****बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, (बिहार)

सी-बकथॉर्न के औषधीय लाभ

- सी बकथॉर्न की चाय में विटामिन डी, एंटीऑक्सीडेंट, प्रोटीन, अमीनो अम्ल, फैटी एसिड और मिनरल्स आदि पोषक तत्व होते हैं और यह ब्लड प्रेशर के मरीजों के लिए फायदेमंद होती है। यह चाय ब्लड कॉलेस्ट्रॉल कम करती है और इम्यूनिटी को बढ़ाने के लिए बहुत फायदेमंद है।
- इसका सेवन करने से यह शरीर की वृद्धि, विकास और शरीर को स्वस्थ रहता है।
- अन्य कोशिकीय संरचनाओं के लिए निर्माण ब्लॉक के रूप में काम करता है।
- ठंडे शरीर में इंसुलेशन देता है।
- सी-बकथॉर्न की पत्तियों और फूलों का उपयोग गठिया, गाउट, स्किन समस्या, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल अल्सर जैसी बीमारियों के उपचार में किया जाता है।
- यह एथलीट को बेहतर प्रदर्शन में भी मदद करता है। एथलीटों की सहनशक्ति बढ़ाने के साथ-साथ प्रतियोगिता के बाद उन्हें दोबारा स्वस्थ रखता है।
- शोधकर्ताओं के अनुसार, इसमें मौजूद फॉस्फेटिडाइलेसेरिन(पीएस) शरीर के ऊतकों को टूटने से बचाता है।
- मानसिक तनाव को दूर करता है।
- कैंसर में फायदेमंद।
- डायबिटीज में लाभप्रद।
- मांसपेशियों को मजबूत बनाता है।
- थायरॉइड को कंट्रोल करता है।
- लीवर को हृष्टपुष्ट रखता है।
- इसमें पाया जाने वाला एंटीऑक्सीडेंट ब्रेन ट्यूमर के विकास को रोकता है।
- रेडियोप्रोटेक्टिव गुण होने के कारण शरीर को विकिरण से बचाता है।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।
- वजन नियंत्रण करने में सहायक।
- बाल, नाखून और स्किन को स्वस्थ रखता है।
- आंखों को स्वस्थ रखता है।
- एल्जाइमर से निजात दिलाने में मददगार है।
- सिरोसिस, एक्जिमा, झांइयां और मुंहांसों में भी फायदेमंद है।

सी-बकथॉर्न जैम

सी, ई, अमीनो अम्ल, लिपिड, बीटा कैरोटीन, लाइकोपिन के अलावा प्रो-विटामिन, खनिज और बॉयोलॉजिकल एक्टिव तत्व पाए जाते हैं। यह इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाने के लिए एक उत्तम फल है।

डीआरडीओ भी कर रहा है शोध

वर्ष 2010 में पर्यावरण मंत्रालय और डिफेंस रिसर्च एंड डेवलपमेंट ऑर्गनाइजेशन (डीआरडीओ) ने एक विशाल राष्ट्रीय पहल की शुरुआत की थी। हिमाचल प्रदेश के स्पीति गांव के लोग भारी बर्फबारी की वजह से पूरे छह माह तक बाहरी दुनिया से कटे रहते हैं। ऐसे में उन्हें एक ऐसे विकल्प की तलाश थी जो उन्हें मुश्किल समय के साथ नियमित तौर पर रोजगार मुहैया करवाता रहे।

शोध संस्थानों द्वारा एक ऐसी पद्धति की खोज की गई है, जिसके द्वारा एसिडिक एसिड की सबसे ज्यादा मात्रा वाले इस फल का जूस तैयार किया गया। इस फल का जूस सियाचिन या द्रास या फिर कारगिल जैसे इलाकों में जमता नहीं है। इस पेटेंट टेक्नोलॉजी को सहायता ग्रुप, कुछ एनजीओ और स्थानीय उद्यमियों को ट्रांसफर किया गया।

सी-बकथॉर्न का उपयोग

- सी-बकथॉर्न ड्राई बेरीज
- सी-बकथॉर्न एक्स्ट्रेक्ट सॉफ्ट जैल, कैप्सूल
- सी-बकथॉर्न इम्यूनिटी बूस्टर जूस
- सी-बकथॉर्न ब्यूटी केयर प्रॉडक्टस
- सी-बकथॉर्न का ऑयल लिक्विड एक्स्ट्रेक्ट
- एनर्जी ड्रिंक
- सीप्रिकॉट जूस
- जैम, जैली

इसके बाद कुछ और उत्पाद जैसे हर्बल टी, एंटी-ऑक्सीडेंट सप्लीमेंट, सीप्रिकॉट जूस, जैम, जैली, सी-बकथोर्न ऑयल सॉफ्ट जैल कैप्सूल, यूवी प्रोटेक्टिव ऑयल, बेकरी प्रॉडक्ट्स और जानवरों का चारा तैयार किया गया। ■

निवेदन

लेखक बंधु *फल फूल* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ ई-मेल पर ही भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी ई-मेल के माध्यम से भेज सकते हैं। भेजने के लिए कृपया कृतिदेव 010 टाइप फेस का प्रयोग करें।

हमारा ई-मेल है :

phalphul@gmail.com

–संपादक

सेब में वूली एप्पल एफिड का प्रबंधन

फल विशेषांक

सुमित वशिष्ठ*, **उपेन्द्र शर्मा*** और **सुधीर वर्मा***

सेब बागवानी में हिमाचल प्रदेश का बागवान शताब्दी समारोह मना चुका है और इस महत्वपूर्ण उपलब्धि के लिए प्रदेश के बागवान बधाई के पात्र हैं। स्पीति में भी सेब पिछले 2 दशक से भरपूर फसल दे रहा है। स्पीति में शुरूआती दौर में तो मौसम सेब बागवानी के अनुकूल था। इसलिए पौधों पर कीट एवं रोगों का प्रकोप न के बराबर होता था, लेकिन अब जलवायु परिवर्तन की वजह से बगीचों में कीट और रोगों का प्रकोप बढ़ गया है। बागवानों की नजर से कोई भी कीट और रोग नजरअंदाज नहीं होना चाहिए, नहीं तो कीट एवं रोग अपना विकराल रूप धारण कर सकते हैं और लाइलाज बन सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप पौधों का विकास रुक सकता है और बगीचे सूखने लगते हैं। स्पीति में सेब के पौधों पर मुख्यत: 10 प्रकार के कीट, कवक और अन्य रोग हमला करते हैं। अमूमन ये सारे रोग पौधों पर एक साथ प्रहार नहीं करते हैं। कलियों के खिलने से लेकर सर्दियों में डोरमैंसी के दौरान (पौधे निंद्रा में चले जाते हैं) एक निश्चित अनुक्रम में सक्रिय रहते हैं, जब तक इसकी रोकथाम न हो जाए। इस कारण फलों और पौधों को कीटों और रोगों से बचाने के लिए इन पर दो या तीन स्प्रे एक साथ करना संभव नहीं है।

वूली एफिड, सेब का एक हानिकारक कीट है। इस कीट ने 1910 में विदेशों में सेब की पौधशाला के साथ भारतवर्ष में प्रवेश किया और 1920 तक सेब का मुख्य कीट बन गया। इस कीट से ग्रसित सेब के पौधों की पहचान उनकी शाखाओं, पौधों की छाल में पड़ी दरारों और कटी हुई टहनियों में एक प्रकार के रूई के समान पदार्थ लगे होने से बड़ी आसानी से की जा सकती है। हिमाचल प्रदेश की स्पीति घाटी में सेब के बगीचों में वूली एफिड रोग अपना कहर बरपा रहा है। सामान्य से ज्यादा तापमान बढ़ने और बर्फबारी तथा बारिश न होने के कारण सेब के बगीचों में वूली एफिड का कहर बढ़ जाता है।

सेब के पेड़ों पर *एरियोसोमा लेरिजेरम* नाम का वूली एप्पल एफिड होता है। यह कीट प्रमुख रूप से जड़ों पर आक्रमण करता है। इससे पेड़ के तने सहित प्रभावित भागों पर छोटी-छोटी गांठें बन जाती हैं। इस प्रकार पौधों की खुराक का संचार और वृद्धि रुक जाती है। ऐसे पौधे गुणवत्ता वाले सेब पैदा करने में सक्षम नहीं रहते। वूली एफिड का प्रकोप पेड़ की शाखाओं, मूलवृन्त और भूमि से बाहर निकली हुई जड़ों पर अधिक होता है। इसकी वजह से फल लगने की क्षमता कम हो जाती है। यह कीट, सेब की नर्सरी में मुख्य रूप से हानिकारक होता है और संक्रमित पौधे इसके प्रकोप से मर जाते हैं। यह छोटा सा भूरे तथा बैंगनी रंग का रस चूसने वाला एफिड है, जो जड़ों, तने तथा टहनी पर गांठें बनाते हुए छाल तथा जड़ पर आक्रमण करता

*डा. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, आर.एच.आर.एस.एस. एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, ताबो, जिला-लाहौल स्पीति (हि.प्र.) 172 113

है। वूली एफिड पेड़ की टहनी से रस चूसने वाले कीट हैं। ये पौधों में पाए जाने वाले तरल दिखने वाले पदार्थ पर जीवित रहते हैं। शाखा पर इन कीटों के शिशु बड़ी मात्रा में कॉटन की तरह का पदार्थ तैयार करते हैं। कॉटन या ऊन की तरह दिखने वाला सफेद रंग की तरह का पदार्थ (मोम) एप्पल एफिड के शिशु छोड़ते हैं। यदि इस रूई को हटाकर देखा जाये तो इसके अन्दर गहरे लाल व भूरे रंग के छोटे-छोटे कीट (जिनका आकार 1 मि.मी. होता है) नजर आते हैं। ये कीट हमेशा समूह में रहते हैं। वयस्क कीट एक से दूसरी जगह के लिए उड़ सकते हैं और दूसरे स्थान पर बैठकर बड़ी मात्रा में अंडे देते हैं। वूली एफिड कीट की साल में 13 पीढ़ियां होती हैं और शिशु कीट पैदा होने के 24 घंटों में सफेद रूई की तरह का पदार्थ छोड़ते हैं।

वूली एफिड झुंड में रहता है और पौधों के कोमल भागों जैसे पत्ती, कोंपल, फल, कटे-फटे भागों से रस चूसता है। इससे पौधे का विकास रुक जाता है और कमजोर सा नजर आता है। नतीजतन फल का विकास रुक जाता है और आकार छोटा रह जाता है। ये कीट पौधों की क्षतिग्रस्त छाल में भी जीवनयापन करते हैं। यह कीट मई से लेकर नवंबर तक पौधों में बढ़ता रहता है। बरसात में लगातार वर्षा होने से इसकी संख्या कम हो जाती है। अधिक सर्दी में, दिसम्बर से मार्च तक इसकी प्रजनन क्रिया धीमी हो जाती है।

वूली एफिड का नियंत्रण

- चूषक जड़ों को पेड़ों के तनों के निचले भागों से हटा देना चाहिए, क्योंकि ये कीट ज्यादातर इन्ही जगहों पर रहना पसंद करते हैं।
- सर्दियों में सेब के पौधों का निरीक्षण करने के बाद कांट-छांट के उपरान्त कटे-फटे भागों व दरारों पर पेस्ट लगा देना चाहिए।
- जड़ों में पाए जाने वाले वूली एफिड के आक्रमण को रोकने के लिए क्लोरोपायरीफॉस (डरमेट) 400 मि.ली./200 ली. का पानी में घोल बना कर दौजियों की सिंचाई करें।
- वूली एफिड को नष्ट करने के लिए जैविक नियंत्रण एक उपयुक्त व प्राकृतिक विधि है। उदाहरणतया लेडी बर्ड बीटल और सिरफिड फ्लाई, वूली एफिड की काफी संख्या को नष्ट कर देते हैं।

फलविहीन पौधों पर

- 10-30 ग्राम फोरेट (थीमेट 10 जी) या 30-50 ग्राम (कार्बोफ्यूरॉन 3 जी), जड़ों के पास 5 सेंमी. गहराई तक डालें।

फलदार पौधों पर

- जुलाई और सितम्बर के बीच 0.08% ट्रॉयजोफोस (400 मि.ली. होस्टाथियॉन 40 ई.सी. प्रति 200 लीटर पानी) या 0.04% क्लोरोपायरिफोस (400 मि.ली. इरमट/ डर्सबान/मैसबान/धनुषबान/ रूवान/फोर्स/ट्राससल 20 ई.सी. प्रति 200 लीटर पानी) का छिड़काव करें।
- मई और जून के मध्य, वूली एफिड पर इस का प्राकृतिक शत्रु 'एफिलिनस माली' आक्रमण करता है जिसके कारण वूली एफिड काले ममी के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। टहनियां, जिसमें काले ममी बिना छेद के हों, को काटें और वूली एफिड से प्रभावित टहनियों पर बांध दें।
- अप्रैल में दानेदार फोरेट (25-30 ग्राम) या कार्बोफ्यूरॉन (70-80 ग्राम) पौधों के तने के समीप जड़ों के पास 10 सेंमी. गहराई तक डालें।
- अक्तूबर महीने में पौधों के कॉलर भाग पर 5 लीटर 0.2% ट्रायजाफॉस (5 मिली होस्टाथियॉन 40 ई.सी. प्रति 1 लीटर पानी) या 5 लीटर 0.1% क्लोरपायफॉस (5 मि.ली. डरमट/डर्सबान/मैसबान/रूवान/फोर्स/ट्रायसल 20 ई.सी. प्रति 1 लीटर पानी) से सिंचाई करें।

वूली एप्पल एफिड से ग्रसित सेब के पौधे

आमतौर पर वूली एफिड का प्रकोप स्पीति में जुलाई और अगस्त महीनों में होता है, लेकिन शुष्क मौसम के दौरान इन कीटों का संक्रमण पौधों पर साल भर भी हो सकता है। बारिश व बर्फबारी के कारण तापमान में गिरावट आने से सेब के पौधों में आक्रमण करने वाले वूली एफिड से छुटकारा मिल जाता है और पौधे खराब होने से बच जाते हैं। तापमान कम होने से वूली एप्पल एफिड निष्क्रिय हो जाता है। बारिश व 4 डिग्री सेल्सियस से नीचे तापमान में वूली एफिड के शिशु वयस्क बन कर पौधे के ऊपरी भाग से जड़ों की तरफ या दरार वाले तनों व जमीनी सतह की तरफ पलायन कर जाते हैं। 12 से 14 डिग्री सेल्सियस तापमान में यह कीट सक्रिय हो जाता है। 8 डिग्री सेल्सियस से नीचे यह जिंदा तो रहता है लेकिन इसकी सक्रियता समाप्त हो जाती है। वूली एफिड की रोकथाम के लिए किसी भी प्रकार का रासायनिक कीटनाशक इस्तेमाल किया जा सकता है। ■

बढ़ाएं संतरे की उपज

दुर्गाशंकर मीणा*, **डॉ मूलाराम****, **जयराज सिंह गौड़***** और **मुकुट बिहारी*****

भारत में केले के पश्चात नीबू प्रजाति के फलों का स्थान है। सर्दी तथा गर्मी सहन करने की क्षमता होने के कारण नीबू प्रजाति का कोई ना कोई फल लगभग सभी प्रांतों में उगाया जाता है। इन नीबूवर्गीय फलों में संतरा भी एक महत्वपूर्ण फल है जिसको मुख्य रूप से खाने व रस प्राप्ति के उद्देश्य से उगाया जाता है। संतरे को वानस्पतिक रूप से *सिट्रस रिटीकुलेटा* के नाम से जाना जाता है। इसका कुल रुटेसी एवं उत्पत्ति स्थल दक्षिणी चीन है।

भारत में नीबू प्रजाति के फलों में संतरे का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। इसे मेंडेरीन भी कहते हैं। इसका छिलका फाँकों से चिपका रहता है। अत: आसानी से छीला जा सकता है। संतरा अपनी सुगंध और स्वाद के लिए प्रसिद्ध है। इसमें विटामिन-सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, इसके साथ-साथ इसमें विटामिन 'ए' और 'बी' भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहते हैं। देश के अंदर संतरे का कुल क्षेत्रफल 4.28 लाख हैक्टर है, जिससे 51.01 लाख टन उत्पादन होता है। संतरे की औसतन उत्पादकता 14.84 एमटी/हैक्टर है। राजस्थान राज्य में नागपुर मेंडेरिन का कुल क्षेत्रफल लगभग 23,900 हैक्टर है, जिससे कुल उत्पादन 4.7 लाख टन होता है। राजस्थान में संतरे की खेती मुख्य रूप से झालावाड़ व कोटा जिलों में ही की जाती है। राजस्थान में होने वाले संतरे के कुल उत्पादन में अकेले झालावाड़ का 90 प्रतिशत से अधिक योगदान है। इसलिए झालावाड़ को राजस्थान का नागपुर भी कहते हैं। झालावाड़ में संतरा उत्पादन का मुख्य कारण यहाँ की मिट्टी में उपस्थित कैल्शियम कॉर्बोनेट की परत है।

सारणी : संतरे का पोषण महत्व

क्र. सं.	अवयव	पोषण मूल्य प्रति 100 ग्राम
1.	ऊर्जा	49 किलो कैलोरी
2.	कार्बोहाइड्रेट	11.89 ग्राम
3.	प्रोटीन	0.94 ग्राम
4.	कुल वसा	0.30 ग्राम
5.	कोलेस्ट्रॉल	0 मिलीग्राम
6.	आहार फाइबर	2.50 ग्राम
7.	फोलेट	39 माइक्रोग्राम
8.	नियासिन	0.274 मिलीग्राम
9.	पैंटोथेनिक एसिड	0.250 मिलीग्राम
10.	पाइरिडोक्सिन	0.063 मिलीग्राम
11.	राइबोफ्लेविन	0.040 मिलीग्राम
12.	थायमिन	0.087 मिलीग्राम
13.	विटामिन-सी	48.5 मिलीग्राम
14.	विटामिन-ए	230 आईयू
15.	कैल्शियम	40 मिलीग्राम
16.	कॉपर	39 माइक्रोग्राम
17.	मैग्नीशियम	10 मिलीग्राम
18.	आयरन	0.09 मिलीग्राम
19.	जिंक	0.06 मिलीग्राम
20.	मैंगनीज	0.023 मिलीग्राम

Source: USDA National Nutrient data base

जलवायु

संतरा उष्ण व उपोष्ण जलवायु का पौधा है। जिन क्षेत्रों में वर्षा 75 से 100 सेंटीमीटर तक होती है, वहाँ पर इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। संतरे के लिए वातावरण में अधिक आर्द्रता होनी चाहिए। इसके लिए 23 से 40 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। राजस्थान में इसकी खेती झालावाड़ व कोटा जिलों में व्यावसायिक स्तर पर की जाती है।

भूमि

संतरे की खेती लगभग सभी प्रकार के

*तकनीकी सहायक, **सहायक आचार्य, ***कृषि पर्यवेक्षक, कृषि अनुसन्धान केंद्र, मण्डोर (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर)

अच्छे जल, निकास वाली जीवांशयुक्त भूमि में की जा सकती है, परंतु गहरी दोमट-मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। भूमि की गहराई 2 मीटर होनी चाहिए। मृदा का पीएच 4.5 से 7.5 उचित रहता है। इसकी सफलतम खेती के लिए मृदा कंकरीली, पथरीली व कठोर नहीं होनी चाहिए।

उन्नत किस्में

भारत में उगाई जाने वाली किस्मों में नागपुरी संतरा, खासी संतरा, कुर्ग संतरे, पंजाब देसी, दार्जिलिंग संतरा व लाहौर लोकल आदि प्रमुख हैं। भारतीय संतरे में नागपुर संतरे सर्वोपरि हैं एवं विश्व के सर्वोत्तम संतरे में इसका स्थान प्रमुख है। किंग तथा विलोलीफ के संस्करण से तैयार किन्नो की किस्म पंजाब और राजस्थान में व्यावसायिक महत्व की है।

प्रवर्धन

संतरे का वानस्पतिक प्रवर्धन कलिकायन विधि द्वारा किया जाता है।कलिकायन के लिए मूलवृन्त के रूप में जट्टी खट्टी, जम्भिरी, रंगपुर लाइम, किलओप्टरा मेन्डेरिन, ट्रायर सिट्रेन्ज को खट्टा करने के काम में लेते हैं। मूलवृन्त फरवरी माह मे तैयार किये जाते हैं। लगभग एक वर्ष आयु का मूलवृन्त कलिकायन के लिये उपयुक्त रहता है। साधारणत: शील्ड एवं पैच कलिकायन फरवरी से मार्च व सितम्बर-अक्टूबर में किया जाना चाहिए।

पौधा रोपण

कलिकायन किये गये पौधे दूसरे वर्ष जब लगभग 60 सेंमी. के हो जाएं तो पौधारोपण हेतु उपयुक्त माने जाते हैं। संतरे के पौधे लगाने के लिए 90 घन सेंमी. आकार

संतरे से लदा वृक्ष

संतरे का बाग

के गड्ढे मई-जून में 6×6 मीटर की दूरी पर खोदे जाते हैं। उत्तरी भारत में पौधे लगाने का उचित समय जुलाई-अगस्त है। पौधा लगाने से पूर्व प्रत्येक गड्ढे को 20 किलोग्राम गोबर की खाद, 1 किलोग्राम सुपर फॉस्फेट व मिट्टी के मिश्रण से भरना चाहिए। दीमक के नियंत्रण के लिए मिथाइल पेराथियान को 50-100 ग्राम प्रति गड्ढे में देना चाहिए।

खाद एव उर्वरक

सन्तरे के पौधों से उत्तम गुणवत्ता वाले अधिक फल प्राप्त करने के लिए खाद व उर्वरकों का उचित प्रबन्धन करना चाहिए। सन्तरे के पौधों में सारणी अनुसार खाद व उर्वरक देने की अनुशंसा की जाती है।

गोबर की खाद, सुपर फॉस्फेट, म्यूरेट ऑफ पोटाश की पूरी मात्रा दिसम्बर-जनवरी में देनी चाहिए। यूरिया की 1/3 मात्रा फरवरी में फूल आने के पहले तथा शेष 1/3 मात्रा अप्रैल में फल बनने के बाद और शेष मात्रा अगस्त माह के अन्तिम सप्ताह में दें। सन्तरे में फरवरी व जुलाई माह में गौण तत्वों का छिड़काव करना उचित रहता है। इसके लिये 550 ग्राम जिंक सल्फेट, 300 ग्राम कॉपर सल्फेट, 250 ग्राम मैंगनीज सल्फेट, 200 ग्राम मैग्नेशियम सल्फेट, 100 ग्राम बोरिक एसिड, 200 ग्राम फेरस सल्फेट व 900 ग्राम चूना लेकर 100 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

सिंचाई

सर्दी में दो सप्ताह व गर्मी में एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। फल लगते समय पानी की कमी से फल झड़ने लगते हैं। फल पकने के समय पानी की कमी से फल सिकुड़ जाते हैं व रस की प्रतिशत मात्रा घट जाती है। अत: जब सन्तरे का उद्यान फलन में हो तब आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। खाद देने के बाद सिंचाई करना परमावश्यक है। संतरे का सुन्दर ढांचा बनाने के लिए प्रारम्भिक वर्षों में कटाई-छंटाई की जाती है। फल देने वाले पौधों को कटाई-छंटाई की कम आवश्यकता होती है, परन्तु सूखी व रोगग्रस्त टहनियों को काटते रहना चाहिए।

उपज एवं भण्डारण

कलिकायन द्वारा तैयार किये गये पौधे 3-5 वर्ष की आयु में फल देते हैं। प्राय: पुष्पण के 8 से 9 माह बाद फल पक कर तैयार हो जाते हैं। सन्तरे के फलों का रंग हल्का पीला हो जाये, तब इन्हें तोड़ लेना चाहिये। सन्तरे की उपज 600 से 800 फल तथा औसतन 70 से 80 किग्रा. प्रति पौधा प्राप्त होती है। संतरे के फलों को 5-6 डिग्री सेल्सियस तापक्रम

सारणी: संतरे में उर्वरक एवं खाद की अनुशंसा

क्र.सं.	पौधे की आयु	गोबर की खाद	यूरिया	सुपर फॉस्फेट	म्यूरेट ऑफ पोटाश
1.	एक वर्ष	15 किग्रा.	125 ग्राम	250 ग्राम	-
2.	दो वर्ष	30 किग्रा.	250 ग्राम	500 ग्राम	-
3.	तीन वर्ष	45 किग्रा.	375 ग्राम	750 ग्राम	200 ग्राम
4.	चार वर्ष	60 किग्रा.	500 ग्राम	600 ग्राम	200 ग्राम
5.	पाँच वर्ष	75 किग्रा.	625 ग्राम	1250 ग्राम	400 ग्राम

नीबू की तितली का संतरे पर प्रकोप

व 85-90 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता पर 4 महीने तक भण्डारित किया जा सकता है।

कीट एंव व्याधियाँ

कीट-नीबूवर्गीय फलों को नुकसान पहुंचाने वाले विभिन्न कीटों में निम्नलिखित कीट प्रमुख हैं-

नीबू की तितली-तितली की लटें पत्तियों को खा कर नुकसान पहुंचाती हैं। इससे पौधों की वृद्धि रुक जाती है। इसके नियंत्रण के लिये लटों को पौधों से पकड़ कर मिट्टी के तेल में डालना चाहिए। क्विनालफॉस 25 ई.सी. का 1.5 मिली./लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

फलचूषक कीट- यह फलों से रस चूस कर नुकसान करता है। प्रभावित फल पीला पड़कर सूख जाता है और गुणवत्ता भी कम हो जाती है। इस कीट के नियंत्रण के लिये मैलाथियॉन 50 ई.सी. 1 मिली./लीटर पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए। कीट को आकर्षित करने के लिये प्रलोभक का भी उपयोग करना चाहिए। प्रलोभक में 100 ग्राम शक्कर को 1 लीटर घोल में 10 मिली. मेलाथियॉन को मिलाया जाता है।

लीफ माइनर-यह कीट वर्षा ऋतु में नुकसान पहुंचाता है। यह पत्तियों की निचली सतह को क्षतिग्रस्त कर पत्तियों में सुरंग बनाता है। इस कीट के नियंत्रण हेतु मिथाइल डिमेटॉन 25 ई.सी. या क्विनालफॉस 25 ई.सी. का 1.5 मिली./लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

फलों के गिरने की रोकथाम

सामान्यत: माल्टा में तुड़ाई के लगभग पांच सप्ताह पहले से फल गिरने लगते हैं, इसकी रोकथाम हेतु 2, 4-डी (10 पी.पी.एम.) या एन.ए.ए.150 पी.पी.एम.) का छिड़काव करना चाहिये। इसके अतिरिक्त फलन के समय भूमि में समुचित नमी बनाई रखी जानी चाहिये। यदि फलन के समय किसी कवकजनित रोग का प्रकोप हो तो उसके नियन्त्रण का उचित उपाय करना लाभकारी रहता है।

मूलग्रन्थि (सूत्रकृमि)-यह नीबू प्रजाति के फलों की जड़ों को नुकसान पहुँचाता है। इसके प्रकोप से फल छोटे व कम लगते हैं। जिससे पत्तियाँ पीली पड़ कर टहनियाँ सूखने लगती हैं। इसके नियंत्रण के लिये कॉर्बोफ्यूरॉन 3 जी. 20 ग्राम/पौधा देना चाहिए।

व्याधियाँ-नीबूवर्गीय फलों को प्रभावित करने वाली निम्नलिखित व्याधियाँ निम्न हैं-

नीबू का केंकर-यह रोग जेन्थोमोनास सिट्राई नामक जीवाणु द्वारा होता है। रोग से प्रभावित पत्तियों, फलों व टहनियों पर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। फलों पर पीले, खुरदरे धब्बे बन जाने से गुणवत्ता प्रभावित होती है। कागजी नीबू इससे ज्यादा प्रभावित होते हैं। केंकर की रोकथाम के लिये 20 ग्राम एग्रोमाइसीन अथवा 8 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। नये रोगरहित पौधों का चुनाव करें तथा पौधों पर रोपण से पूर्व बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करें।

गमोसिस- यह तना-सड़न रोग है। इसमें तने से भूमि के पास व टहनियों के ग्रसित भाग से गोंद जैसा पदार्थ निकलता है। इस गोंद से छाल प्रभावित होकर नष्ट हो जाती है। रोग के अधिक प्रकोप से पौधा नष्ट हो जाता है। रोग के नियंत्रण के लिये छाल से गोंद हटाकर ब्लाईटॉक्स-50 का 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। इस दवा का छिड़काव पौधों पर भी किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त बाग का उचित प्रबन्धन भी रोग से बचाव करता है।

सूखा रोग (डाई बैक)-इस रोग में टहनियाँ ऊपर से नीचे की तरफ सूखकर भूरी हो जाती हैं। पत्तियों पर भूरे बैंगनी धब्बे बनने से ये सूख कर गिर जाती हैं। इससे उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। तथा पौधा नष्ट हो जाता है। नियंत्रण के लिये रोगी भाग को काट कर अलग करना चाहिए एवं मेन्कोजेब 2 ग्राम/लीटर पानी का घोल का छिड़काव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त फरवरी व अप्रैल माह में सूक्ष्म तत्वों का पौधों पर छिड़काव करना चाहिए। ■

विभिन्न रोगों से प्रभावित संतरे के पत्ते एवं फल

लेखकों से अनुरोध

आज सूचना प्रौद्योगिकी के बदते हुए कदमों को हमारे पाठक और लेखक दोनों ने पहचाना है। पाठकगण लेखकों से सीधी बात कर सकें। इसलिए हम चाहते हैं कि सभी लेखक अपने लेख के साथ अपना ई-मेल पता तथा मोबाइल नम्बर अवश्य दें।

-संपादक

तरबूज को बनाएं आय का स्रोत

बी.एल. आसीवाल* **सुनिल मीणा**** और **रमेश चन्द्र आसीवाल*****

तरबूज की खेती अच्छे तरीके से और बड़े पैमाने पर करने पर यह आय का अच्छा स्रोत बन सकता है। आजकल संरक्षित खेती में खेत की तैयारी करके क्यारियों में पंक्तियों पर काली प्लास्टिक की फिल्म बिछा देते हैं। यह काली प्लास्टिक न केवल मिट्टी को ज्यादा गर्म होने में मदद करती है, बल्कि जंगली घास को भी नियंत्रित करती है। इसके नीचे ही ड्रिप सिंचाई प्रणाली को डिजाइन और स्थापित करते हैं। पौधे लगाने के लिए तैयार होने पर प्लास्टिक की फिल्म में छोटे- छोटे छेद बना देते हैं, जहाँ छोटे गड्ढे बनाकर पौधों की रोपाई करते हैं।

तरबूज *कुकुरबिटेसी* कुल का गर्मियों का फल है। इसे उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में जायद की फसल के रूप में बहुतायत से उगाया जाता है। तरबूज के फल गर्मी में अधिक स्वादिष्ट होते हैं, साथ ही यह फल मई-जून की तेज धूप तथा लू से भी बचाता है। तरबूज में 92-96 प्रतिशत जल पाया जाता है। इसमें आयरन, मैग्नीशियम, सल्फर अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। साथ ही कुल घुलनशील ठोस 8-12 प्रतिशत, प्रोटीन 0.2 प्रतिशत एवं खनिज लवण 0.3 प्रतिशत होते हैं।

- तरबूज के बीजों में प्रोटीन, विटामिन-बी, खनिज लवण होते हैं। बीजों का सेवन करने से यह मधुमेह को नियंत्रित करता है तथा यह अस्थमा रोगियों के लिए भी लाभदायक है। बीजों में प्रोटीन की अच्छी मात्रा होने से यह नाखूनों एवं बालों के रखरखाव के लिए अच्छा है।

जलवायु-तरबूज के लिए अधिक तापमान वाली जलवायु सबसे अच्छी रहती है। अच्छी बढ़वार के लिए 25-30 सें.ग्रे तापमान, अंकुरण के समय 22-25 सें.ग्रे तथा फलन वृद्धि के लिए 28-30 सें.ग्रे. तापमान उपयुक्त होता है। इसके फलों में अधिक मिठास के लिए न्यूनतम आर्द्रता जरूरी है। तापक्रम अधिक होने पर नर फूलों का अनुपात बढ़ने से उत्पादन में कमी आती है।

तरबूज सेवन से लाभ

तरबूज को सलाद के रूप में काम में लिया जाता है। इसके बीजों में अच्छी मात्रा में प्रोटीन पाये जाने के कारण यह शरीर की मांसपेशियों की बनावट को मजबूत करता है। यह शाकाहारियों के लिए प्रोटीन का अच्छा स्त्रोत है। तरबूज के बीजों के तेल मे लिनोलिक एसिड पाया जाता है और यह त्वचा को मुलायम रखता है तथा हार्ट अटैक के खतरे को कम करता है। इसके बीजों को पकाकर खाने से यह पाचन क्रिया में सुधार करता है तथा तनाव को कम करता है।

तरबूज की फांकें

*सहायक आचार्य, कृषि प्रसार,**छात्र, कृषि प्रसार, ***सहा. आचार्य, कृषि अर्थशास्त्र, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

तरबूज की संरक्षित खेती

मृदा-तरबूज की खेती के लिए जैविक तत्वों से युक्त रेतीली दोमट, बलुई मृदा जिसका पी.एच. मान 5.5-6.6 हो, उत्तम मानी जाती है।

खेत की तैयारी-बुआई से पहले 3-4 बार जुताई देसी हल से करने के बाद नमी सरंक्षण हेतु पाटा लगा देते हैं।

उन्नत किस्में-शुगर बेबी, अर्का माणिक, अर्का ज्योति, क्रिमसन स्वीट, पूसा रसाल

संकर किस्में-नवाब, सजीता, कान्हा, धारीदार,

प्रवर्धन बीज द्वारा-तरबूज की पौध तैयार नहीं की जाती, क्योंकि पौधरोपण से जड़ क्षेत्र में सुबैरिन पदार्थ बनने से यह जड़ एवं पोषक तत्वों का अवशोषण अवरुद्ध कर देता है।

बुआई का समय-तरबूज की बुआई का उचित समय फरवरी-मार्च है।

बीज दर-3-4 किलोग्राम प्रति हैक्टर पर्याप्त है।

बुआई-तरबूज की बुआई लाइनों में 150 से 200 सेंमी. की दूरी पर, पौधे से पौधे की दूरी 90 सेंमी. तथा बीज की गहराई 2-2.5 सेंमी रखकर करनी चाहिए। आजकल संरक्षित खेती में खेत की तैयारी करके क्यारियों में पंक्तियों पर काली प्लास्टिक की फिल्म बिछा देते हैं। यह काली प्लास्टिक न केवल मिट्टी को ज्यादा गर्म होने में मदद करती है, बल्कि जंगली घास भी नियंत्रित करती है। इसके नीचे ही ड्रिप सिंचाई प्रणाली को डिजाइन और स्थापित भी करते हैं। लगाने के लिए पौधे तैयार होने पर प्लास्टिक की फिल्म में छोटे-छोटे छेद बना देते हैं, जहाँ छोटे गड्ढे बनाकर पौधों की रोपाई करते हैं।

उर्वरक प्रयोग-इसमें कम्पोस्ट या गोबर की खाद 10-15 टन प्रति हैक्टर बुआई पूर्व डाली जाती है। अच्छी उपज के लिए 80 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फॉस्फोरस, 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता पड़ती है।

सिंचाई-तरबूज में बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति का प्रयोग किया है। प्रारंभिक अवस्था में सिंचाई 3-4 दिनों के अंतराल एवं बाद में 7 दिनों के अंतराल पर की जाती है।

खरपतवार नियंत्रण-फसल की प्रारंभिक अवस्था में ही एक-दो बार हाथ से निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों का नियंत्रण करें। खरपतवारों का रासायनिक नियंत्रण करने के लिए मेटाम सोडियम को काम में लिया जाता है।

कीट प्रबंधन

1. सीडकोन बीटल-इसकी लट बीजों को अंकुरित ही नही होने देती।

2. चेंपा या माहूं: यह कीट पौधे के कोमल भागों से रस चूसकर पौधों को कमजोर कर देता है। इन कीटों के प्रकोप से पत्तियों पर चिपचिपा पदार्थ जमा हो जाता है। इस पर कई प्रकार की काली फफूंद पैदा हो जाती हैं, जिससे पौधे की बढ़वार रुक जाती है।

बचाव: खेत को खरपतवार मुक्त रखें तथा समय पर कीटनाशक का स्प्रे करें।

रासायनिक नियंत्रण: कीट की रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 100 मिलीलीटर दवा प्रति हैक्टर 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

3. स्पोटेड बीटल-यह मध्य मई में अत्यधिक क्रियाशील होता है एवं बैक्टीरिया विल्ट उत्पन्न करता है।

4. लाल मकड़ी घुन: यह गर्मी के मौसम में खरबूजे एवं खीरे में अधिकतर आक्रमण करता है। यह बहुत छोटा तथा लाल रंग का कीट है तथा पत्तियों की निचली सतह पर अधिकतर मिलता है। इसके नियंत्रण के लिए घुलनशील गंधक (0.2 प्रतिशत) या

कीटों से सुरक्षा

1. **फल मक्खी:** यह कद्दूवर्गीय सब्जी फसलों में फलों पर आक्रमण करने वाला प्रमुख कीट है। तरबूज की फसल में मादा कीट कोमल फलों में अपना अण्डारोपक गड़ा कर छिलके के नीचे अण्डे देती है। इसके अण्डों से ग्रब व लट निकलकर फल में सुरंग बनाकर फल के गूदे को खाती हैं। इससे फल सड़ने लगते हैं और टेढे-मेढ़े हो जाते हैं। बाद में कमजोर होकर बेल से अलग होकर खराब हो जाते हैं। इसके मैगट का सीधे नियंत्रण सम्भव नहीं है। परन्तु वयस्क नर मक्खियों को नियंत्रित करके प्रकोप को कम किया जा सकता है।

इसके नियंत्रण के लिए निम्न उपाय अपनाये जा सकते हैं:-

- खेत में रात के समय प्रकाश ट्रैप लगायें तथा उनके नीचे किसी बर्तन में चिपकने वाला पदार्थ जैसा सीरा अथवा गुड़ का घोल भरकर रखें। 2-3 दिन बाद घोल को बदलते रहें।
- नर वयस्कों को फेरामोन के ट्रैप लगाकर नियंत्रित करें।
- इमिडोक्लोप्रिड 70 प्रतिशत 1 मिली या डाईमिथेट का 2 मिली प्रति 1 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करने से भी फलमक्खी की संख्या में कुछ कमी की जा सकती है।
- कीट की निगरानी हेतु फसल में गन्धपाश 2 प्रति एकड़ के अनुसार लगायें तथा उसमें ल्योर को 15-20 दिन के अन्तराल पर बदलते रहें।
- इसके रासायनिक नियंत्रण के लिए इमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एस.जी. 250 ग्राम दवा प्रति हैक्टर 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 10 दिनों के अंतराल पर दूसरा छिड़काव करना चाहिये।

तरबूज की बेल एवं उपचार

डाईकोफोल (1 मिली प्रति लीटर) पानी में घोलकर छिड़काव करें।

5. थ्रिप्स के नियंत्रण हेतु 600 मिली. साइपरमेथ्रिन 25ई.सी. छिड़कें।

6. पत्तीसुरंगक कीट (लीफ माइनर) -पहचान: इस कीट के शिशु पत्ती के हरे पदार्थ को खाकर इनमें टेढ़ी-मेढ़ी सफेद सुरंगें बना देते हैं। इससे पौधों का प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है। अधिक प्रकोप से पत्तियां सूख जाती हैं।

बचाव: ग्रसित पत्तियों को निकालकर नष्ट कर दें।

रासायनिक नियंत्रण: इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 100 मिलीलीटर दवा प्रति हैक्टर 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

7. सिल्वर लीफ वाइट फ्लाई-यह वायरल बीमारियों को फैलाती है।

नियंत्रण- कार्बेरिल 50 प्रतिशत घुलनशील पाउडर को 2 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें या 400 मिलिडाईमिथाऐट 30 ई.सी. या मिथाइल डेमेटोन 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

तरबूज में रोग व व्याधि प्रबंधन

रोग (व्याधियां)- तरबूज में वर्टीसिलियम विल्ट, फ्यूजेरियम विल्ट, पाउडरी मिल्ड्यू का मुख्यत: प्रकोप होता है।

इसके अलावा सूखा आदि रोग मुख्यत: नुकसान पहुचाते हैं।

रोगग्रस्त पत्ती

1. वायरल रोगों के नियंत्रण हेतु कीटनाशी का छिड़काव करें। रोगों से बचाव हेतु रिडोमिल या मेन्कोजेब 2 ग्राम/लीटर का छिड़काव एक सप्ताह के अंतराल पर 3-4 बार करें। इसमें टोपसो वायरस से बेल सूख जाती है।

2. मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्डयू) रोग की पहचान: रोग के लक्षण में पत्ती की ऊपरी सतह पर हल्के पीले धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में पत्ती की निचली सतह पर मृदुरोमिल फफूंद बैंगनी रंग की दिखाई देती है। रोगी पौधे पर फलों का आकार छोटा रह जाता है। बचाव के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। बीज को उपचारित करके बुआई करें। फसल चक्र अपनायें।

रासायनिक नियंत्रण: तरबूज में इस रोग के नियंत्रण के लिये क्लोरोथालोनिल 75 प्रतिशत डब्ल्यूपी 1.0 किलोग्राम प्रति हैक्टर 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

3. चूर्णिल आसिता:-इस रोग के शुरू में पत्ती की निचली सतह पर छोटे गोलाकार सफेद रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। रोग के अधिक प्रकोप होने पर ये धब्बे दिखाई देते हैं। पत्तियां भूरी हो जाती हैं तथा सिकुड़कर गिर जाती हैं।

इस रोग के नियंत्रण के लिए कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत घोल) का 10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें या कैराथेन की 6 ग्राम मात्रा को 10 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करें तथा घुलनशील गंधक (सल्फर) 0.2 प्रतिशत घोल का रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही 10 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार छिड़काव करें।

4. ब्लूसम एंड रॉट-Ca की कमी से

5. फलों का फटना-अधिक सिंचाई करने से

तुड़ाई-तरबूज में बुआई के 40-45 दिनों बाद फल आना शुरू हो जाते हैं एवं 100-120 दिनों बाद फल पककर तैयार हो जाते हैं। फल पकने पर पीले रंग के दिखाई देते हैं एवं फल को स्पर्श करने पर फल से भारी आवाज आती है।

उपज-आधुनिक तकनीक से खेती करके किसान एक हैक्टर में औसतन 350 से 450 क्विंटल फलोत्पादन लेकर 4.0 लाख तक की आय कमा सकते हैं। ■

'खेती' जुलाई, 2022 विशेषांक के प्रमुख आकर्षण

- हिंदुस्तान की मिट्टियां और उनका निरीक्षण
- भारतीय गेहूं पर सूखा का प्रभाव
- गांवों में वृक्षारोपण
- भारत में मुर्गी पालन
- संयुक्त-प्रांत में मधुमक्खी पालन
- चावलों की दुहरी फसल उत्पादन वृद्धि का एक साधन
- भूमि से अधिक खाद्य उत्पन्न करना
- कृषि अन्वेषण : एक आलोचना
- भारतवर्ष के लिए नया केला
- पशु पालन अनुसंधान
- भारतीय कृषि यंत्रीकरण
- जुलाई माह के मुख्य कृषि कार्य

पपीते की अंतर फसली खेती से बढ़ाएं उपज

फल विशेषांक

स्वाति साहा* और **जी. के. माहापात्रो****

पपीता उन फलदार फसलों में से एक है, जो कि किसानों की आय बढ़ाने के लिए लगाया जा सकता है। पपीता फलोद्यान में अंतर-फसल के रूप में सब्जी फसलों को शामिल करने को उचित समझा जा सकता है। अंतर-फसल के रूप में बढ़ रही अन्य फसलों में इस प्रारंभिक अवधि का इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे किसानों को किसी एकाकी फसल के मामले में लंबी अवधि तक उत्पाद की प्रतीक्षा करने की बजाय समय-समय पर उत्पाद की तुड़ाई करते हुए आमदनी के नियमित स्रोत को प्राप्त करने में मदद मिलेगी।

भारतीय बागवानी सेक्टर आय सृजन करने वाली प्रमुख कृषि गतिविधियों के रूप में उभर कर सामने आया है। इसमें बागवानी फसलों के क्षेत्रफल और उत्पादन दोनों में पर्याप्त बढ़ोतरी के साथ अनेक मूल्यवर्धित कार्यकलाप सन्निहित हैं। अन्य फसलों के मुकाबले में बागवानी फसलों में वंशानुगत लाभ हैं। इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण इलाकों में कई उच्चतर आमदनी और रोजगार सृजन के अवसर मिलते हैं।

अंतर-फसलचक्र क्यों है जरूरी

जब एक अथवा दो फसलों को एक साथ उगाया जाता है, तब प्रत्येक फसल में अधिकतम सहयोग करने में पर्याप्त स्थान होना चाहिए और साथ ही दोनों फसलों के बीच प्रतिस्पर्धा कम होनी चाहिए। इसे निम्नलिखित कारकों की स्थानिक व्यवस्था, पादप सघनता, उगाई गई फसलों की परिपक्वता, पादप आर्किटेक्चर द्वारा सम्पन्न किया जाता है। अंतर-फसलचक्र को मूल रूप से जलवायु परिस्थितियों में अनियमित बदलावों के कारण फसल असफलता के विरूद्ध एक बीमे के रूप में आजमाया जाता है। लेकिन, वर्तमान में अंतर-फसलचक्र का उद्देश्य उत्पादन में स्थिरता के अलावा प्रति इकाई क्षेत्रफल में कहीं उच्चतर उत्पादकता लाना है। इस प्रणाली में, संसाधनों का उपयोग प्रभावी रूप में किया जाता है और उत्पादकता को बढ़ाया जाता है।

पपीता उन फसलों में से एक है, जो कि किसानों की आय बढ़ाने के लिए लगाया जा सकता है। इसकी पौष्टिकता के कारण दुनिया भर में इसे उगाया जाता है। पपीता फल विटामिन ए, पोटेशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम से भरपूर होता है। यह पाचन को बढ़ावा देने में भी मदद करता है। आजकल पपीते के पत्तों को सबसे ज्यादा डेंगू बीमारी के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है, ताकि रक्त में प्लेटलेट्स की बढ़ोतरी हो।

पपीता फलोद्यान में अंतर-फसलचक्र को अपनाना लाभकारी होता है। जब पपीते का पत्ती क्षेत्रफल सूचकांक (LAI) कम होता है, तब पपीते की अगेती शाकीय और पछेती फलन अवस्थाओं में यह सीमित होना चाहिए। फल लगने से पहले वाली अवस्थाओं में जब पपीते के पौधे युवा होते हैं, तब गर्मियों में प्याज, फ्रेंचबीन और लोबिया जैसी कम अवधि वाली अंतर फसलों को और सर्दियों में फूलगोभी, बंदगोभी, मूली और मटर की अंतर फसलों को उगाना लाभदायक होता है। इससे किसानों की आमदनी बढ़ती है। कुछ किसान मृदा के उपजाऊपन में सुधार करने और मृदा को खरपतवारों से मुक्त बनाये रखने के लिए पपीता फलोद्यान में हरी खाद फसलों को उगाना पसंद करते हैं। पपीता फलोद्यानों में रोपी गई अंतर फसलों के आर्थिक लाभों

अंतर-फसलचक्र प्रणाली

भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पुणे द्वारा यह कार्य किया जा रहा है कि कैसे महाराष्ट्र और साथ ही देश के अन्य भागों में पपीते की खेती करके किसानों की आय को दोगुना किया जाए। अपने भरपूर पोषणिक और औषधीय मूल्य के कारण प्रमुख व्यावसायिक महत्व के साथ पपीता उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण फलदार फसल है। हालांकि, इसकी वास्तविक क्षमता का दोहन अभी भी उन्नत किस्मों की गुणवत्ता रोपण सामग्री की कमी और तुड़ाई से पहले तथा बाद में अधिक नुकसान होने के कारण पूरी तरह से नहीं किया जा सका है। क्षेत्रीय केन्द्र, पुणे द्वारा अच्छे बागवानी गुणों वाले कुछ उन्नत वंशक्रमों की पहचान की गई है। केन्द्र एक अवसर के रूप में इसकी प्रौद्योगिकी के साथ आगे आया है एवं इसके परिणामस्वरूप उत्पादन स्थिति में बदलाव भी आया है तथा आदानों के उपयोग में प्रभावशीलता बढ़ी है। इस संस्थान ने अच्छे बागवानी लक्षणों के साथ कुछ वंशक्रमों की पहचान की है, जो कि पपाया रिंग स्पॉट विषाणु से सहिष्णु है।

*भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे,**सर्वे सं. १२५ए, बाणेर फाटा, आई. टी. आई.रोड, औंध, पुणे-४११००७

पपीते के साथ मिर्च

में शामिल है, जैसे कि अकेले फसलचक्र के मुकाबले में प्रति इकाई क्षेत्रफल से अतिरिक्त आय उत्पन्न करना, असामान्य वर्ष में फसल की असफलता के मामले में बीमे के रूप में कार्य करना, मृदा की उर्वरता को बनाये रखना इसके साथ ही मृदा जल अपवाह को कम करने और खरपतवारों की रोकथाम में भी यह विधि प्रयोग की जाती है। पपीता फलोद्यान में अंतर-फसल के रूप में सब्जी फसलों को शामिल करने को उचित ठहराया जा सकता है। अधिक समय तक उपज देने वाली पपीता फलदार फसल में बहार आने से पहले पोषणिक और आर्थिक कारणों से एक अगेती उपजशील फसल प्राप्त करने में इस अंतर फसलचक्र प्रणाली के तहत मदद मिलती है।

पपीते में सफल अंतर फसल के लिए कुछ महत्वपूर्ण आवश्यकताएं हैं जैसे कि पपीते में जो अंतर फसल उगायी जाती है उसकी पोषक मांग के समय को इंटरक्रॉपिंग सिस्टम से ओवरलैप नहीं होना चाहिए। अंतर-फसलों के बीच प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा न्यूनतम होनी चाहिए एवं इंटरक्रॉप्स की कटाई, पपीते की घनी कैनोपी अवस्था से पहले होनी चाहिए। इसके साथ ही यह भी ध्यान देना चाहिए कि इंटरक्रॉप्स एवं पपीते के विषाणु आपस में संक्रमित न हों। इसलिए हमें विषाणु प्रतिरोधी किस्में ही लगानी चाहिए। दोगुनी आय प्राप्त करने के लिए, किसान अंतर-फसल के साथ-साथ, पपीते में बाड़ फसल के रूप में अमरूद एवं मोरिंगा/सहजन भी लगा सकते हैं। मोरिंगा की पत्तियों और फली की सब्जी बनती है। इससे किसान बाड़ फसल का भी निरंतर लाभ उठा सकते हैं।

जलवायु एवं मृदा

पपीता, मूलरूप से एक उष्णकटिबंधीय पौधा है, हालांकि यह अन्य भागों में उगाया जाता है। कम तापमान और पाला इसकी खेती को अधिक ऊंचाई वाले इलाकों में सीमित करते हैं। रात में अत्यधिक सर्दी पड़ने से इसके फल में परिपक्वता धीमी होती है और सर्दियों के मौसम में खराब गुणवत्ता भी होती है। इसे अर्ध-उष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय जलवायु में उगाया जाता है। इसकी खेती 25 से 35 सेल्सियस तापमान में की जाती है। अधिक आर्द्रता से फलों की मधुरता प्रभावित होती है। कम तापमान वाली परिस्थिति में भी फल अपनी मधुरता अथवा मिठास को खो देते हैं। फलों के पकने वाले मौसम में गरम और शुष्क जलवायु की जरूरत होती है। इकहरा तथा उथली जड़ वाला पौधा होने के कारण यह तेज हवाओं में खड़ा नहीं रह सकता।

पपीते के साथ धनिया

पपीते को केवल रेतीली और चिपचिपी अथवा भारी क्ले मृदाओं को छोड़कर अन्य कई प्रकार की मृदाओं में भी उगाया जा सकता है। इसकी जड़ें जलभराव अथवा खेत में पानी खड़ा रहने के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। यहां तक कि 48 घंटों तक जलभराव होना पौधे के लिए घातक हो सकता है। भारी मृदाओं में, अधिक वर्षा होने पर खेत में पानी इकट्ठा हो जाता है और पादप विगलन तथा जड़सड़न जैसे रोग होने लगते हैं जिससे बहुत कम समय में ही रोपण को भारी नुकसान हो सकता है। अत: आंशिक रूप से ढ़लानदार भूमि को कहीं अधिक पसंद किया जाता है। जैविक सामग्री में अच्छी जल निकासी होने के कारण इस इलाके की पर्वतीय मृदा सबसे अधिक अच्छी पाई जाती है।

नर्सरी

पपीते को हमेशा से बीजों द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। खेत में पौध-रोपण की तय तारीख से दो ढाई माह पहले ही नर्सरी में बुआई कर देनी चाहिए। 22 सेंमी.×15 सेंमी. आकार वाले तथा 150 गेज की मोटाई वाले छिद्रित पॉलिथिन थैलों में बीजाई करना बेहतर रहता है। भारी और मध्यम प्रकृति वाली मृदाओं के मामले में, थैलों में गोबर की खाद, मृदा और रेत का 1:1:1 मिश्रण भरा जाना चाहिए। सरन्ध्रीय मृदा वाले पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए एक भाग मृदा और एक भाग गोबर की खाद का पॉटिंग मिश्रण अनुकूल रहता है। बीजों को 2 ग्राम/किग्रा. की दर पर कैप्टॉन के साथ उपचारित करना चाहिए। पॉलिथिन थैलों में जिनकी गहराई एक सेंमी. से अधिक नहीं हो, में चार बीजों को डालना चाहिए। पाइप की मदद से सिंचाई की जा सकती है। वर्षाकाल को छोड़कर प्रत्येक सायंकाल में फव्वारे की मदद से हल्की सिंचाई करनी चाहिए। बीज दो से तीन सप्ताह में अंकुरित हो जाते हैं। एक हैक्टर के कृषि रकबे में रोपाई करने के लिए पौध पर्याप्त संख्या को तैयार करने हेतु लगभग 250 से 300 ग्राम बीज ही पर्याप्त होते हैं। यूरिया अथवा अमोनियम सल्फेट को शामिल करके थैलों में पौध की शीर्ष ड्रेसिंग करने से बचा जाना चाहिए क्योंकि इससे डैम्पिंग ऑफ रोग और ऊंचे और दुबले-पतले पौधे के विकास को बढ़ावा मिलता है। यह रोपाई के लिए कम उपयुक्त होती है। नर्सरी में पौध तैयार करने का प्रमुख प्रयोजन रेशायुक्त जड़ों और पत्तियों की बड़ी संख्या वाली स्वस्थ (पौध रोपण अवस्था में 15 से 20 सेंमी. ऊंची) तथा स्टॉकी पौध हासिल करना है। पॉटिंग मिश्रण तैयार करने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाली गोबर की खाद का उपयोग करना अच्छा रहता है। रोपाई के लिए पौध लगभग 60 दिनों में तैयार हो जाती है।

पौध-रोपण

मई महीने के प्रथम भाग में 2 से 2.5 मीटर की दूरी बनाये रखते हुए 50 सेंमी. आकार वाले गड्ढे तैयार किए जाते हैं। एक पखवाड़े तक गड्ढों को धूप में रहने दिया जाए और बाद में उनमें मिट्टी की ऊपरी परत के साथ 20 से 25 किलोग्राम गोबर की खाद, 1 से 1.5 किलोग्राम लकड़ी की राख और 1 किलोग्राम हड्डी का चूरा भर दिया जाए। वर्षा नहीं होने की स्थिति में गमलों में जल डाल दिया जाता है ताकि मिश्रण ठीक तरीके से मिल सके। रोपाई करने से पहले, दीमक के हमले से बचाव के लिए गड्ढों को पुन: तर-बतर किया जाता है। जब पौध 15 से 20 सेंमी. लंबी हो जाती है, तब रेजर ब्लेड की मदद से थैलों को काट दिया जाता

है और पौध को सायंकाल के समय में गड्ढों में रोपा जाता है। प्रत्येक गड्ढे में लगभग 15 सेंमी. ऊपर आमतौर पर तीन पौध की रोपाई की जाती है। पौध-रोपण दबाव से तेजी से निपटने के लिए रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई करना जरूरी होता है। भारत के पश्चिमी भाग में, नर्सरी में तैयार की गई पपीता पौध को ऐसे खेत में रोपा जाना चाहिए जहाँ फसल की बढ़वार अवस्था के दौरान एफिड वेक्टर संख्या कम बनी रहे। इससे वायरस संक्रमण के कारण होने वाले नुकसान से बचने में मदद मिलती है। आमतौर पर जून से अक्तूबर के स्थान पर फरवरी के महीने में रोपाई करने पर पौधों पर एफिड के हमले को कम करने में मदद मिलती है।

पपीता पौध की रोपाई करने के तुरन्त बाद तथा पौध जमाव के कुछ दिनों बाद अंतर-फसलचक्र के तहत अल्पावधि वाली फसलों की खेती की जा सकती है। इस संबंध में हमारे केन्द्र पर एक परीक्षण किया गया। आमतौर पर खेत में 40 से 45 दिनों पुरानी पपीता पौध को रोपा जाता है। जैसे ही पौध जम जाती है और उसमें दो से तीन नई पत्तियां निकल आती हैं, तब मेथी, पालक, धनिया आदि जैसी पत्तीदार सब्जियों अथवा यहां तक कि कद्दू, लौकी, खीरा, चिचिण्डा, स्क्वॉश आदि जैसी खीरावर्गीय फसलों अथवा गेंदा या वार्षिकी गुलदाउदी जैसी पुष्पीय फसलों को पपीता पौधों के समानान्तर बोया जा सकता है। खीरावर्गीय फसलों के बीजों को जहाँ गेंदा जैसी फसलों को रोपा गया था, निकट सीधे ही बोया जाता है। पपीते की दो कतारों के बीच में पत्तीदार सब्जी फसलों की पंक्ति में बुआई की जाती है। बुआई अथवा रोपाई के एक तथा डेढ़ महीने बाद पत्तीदार सब्जी फसलों की तुड़ाई की जाती है जबकि खीरावर्गीय और पुष्पीय फसलों में तुड़ाई का कार्य चार से पांच माह बाद किया जा सकता है। सीमा फसल के रूप में सहजन एवं अमरूद से भी किसान प्रति यूनिट क्षेत्र में उपज में वृद्धि कर सकता है।

खाद डालना एवं अंतर-संवर्धन कार्य

पपीते के पौधों के पोषण के लिए पौध रोपण से पहली बार पुष्पण होने तक की पांच माह की अवधि महत्वपूर्ण होती है। फूल आने से कुछ ही समय पहले पौधे द्वारा प्राप्त की गई तना परिधि से ही किसी पौधे में ओज एवं उसकी उत्पादकता का निर्णय होता है। यदि अपर्याप्त पोषण के कारण इस अवधि में पौधा कमजोर बना रहता है तब उसका शेष जीवन इस कमी से प्रभावित ही रहता है। इसलिए, फूल आने से पहले एक मजबूत और ओजपूर्ण पौधा निर्माण तथा पौधे की अनुवर्ती बढ़वार और उत्पादकता के लिए उचित मात्रा में थोड़े-थोड़े अन्तराल पर उर्वरकों का प्रयोग करते रहना चाहिए। उर्वरीकरण के समय, मृदा में नमी पर्याप्त मात्रा में बनी रहती है। हल्की खुदाई करके अथवा कुदाल की मदद से सिंचाई में अथवा बेसिन में उर्वरकों को अच्छी तरह से मिला लेना चाहिए। फसल की तुड़ाई करने से 6 माह पहले ही उर्वरकों का प्रयोग बंद कर देना चाहिए। पपीते के पौधे बहुत तेजी से बढ़ते हैं। एक वर्ष के समयकाल में ही इसमें फल आ जाते हैं। इसलिए किसानों की आय को दोगुना करने हेतु आमतौर पर अंतर-फसलों की खेती की जा सकती है। चूंकि पपीते की फसल में फलों की तुड़ाई करने में लगभग एक वर्ष का समय लगता है, इसलिए अंतर-फसल के रूप में बढ़ रही अन्य फसलों में इस प्रारंभिक अवधि का इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे किसानों को किसी एकाकी फसल के मामले में लंबी अवधि तक उत्पाद की प्रतीक्षा करने की बजाय समय-समय पर उत्पाद की तुड़ाई करते हुए आमदनी के नियमित स्रोत पाने में मदद मिलेगी। जब कभी आवश्यकता हो तब खरपतवारों को हटाना चाहिए और साथ ही उथली सतह पर कुदाल चलाने की जरूरत होती है। जैसे ही नर पुष्प की मौजूदगी दिखाई दे, उनमें से अधिकांश को हटा देना चाहिए।

अन्य फसल के साथ पपीते की अंतर फसल

पपीते के साथ गेंदा

अत्यधिक भीड़-भाड़ से बचने के लिए नियमित रूप से पाक्षिक अन्तराल पर फलों में थिनिंग का कार्य किया जाता है। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के कारण, कभी-कभी फूल अथवा फल पौधे से गिरने लगते हैं। फल पूरी तरह से पकने में लगभग चार से पांच महीने का समय लेते हैं। पेड़ पर पकने वाले फल सबसे अच्छी गुणवत्ता वाले होते हैं और साथ ही भोज्य प्रयोजन के साथ-साथ स्थानीय बाजार के लिए भी उपयुक्त होते हैं। लेकिन दूरवर्ती बाजारों के लिए ठोस फलों में जब उनका शिखर बिन्दु पीला होने लगता है, तब ही तुड़ाई कर ली जाती है। पेड़ पर फलों को अधिक नहीं पकने देना चाहिए क्योंकि इससे पक्षी इन्हें आसानी से नुकसान पहुंचा सकते हैं। इस क्षेत्र में व्यावसायिक रोपण के अंतर्गत, प्रति वृक्ष 20 से 35 किलोग्राम के औसत भार के साथ प्रति वृक्ष 30 से 50 फल की उपज प्राप्त होती है।

यह फसल भारतीय किसानों के बीच एक पोषण से भरपूर स्रोत के रूप में प्रचलित की जानी चाहिए। इसके अलावा, सब्जी के रूप में भी पीआरएसवी सहिष्णु पीएस वंशक्रमों (पुणे सिलेक्शन-१,२,३ एवं ५) की सिफारिश की जाती है। साथ ही पपीते के खेत में मिश्रित फसलचक्र के तौर पर धनिया, मेथी और ड्रमस्टिक आदि को भी शामिल करने पर किसानों को अतिरिक्त लाभ मिलता है। किसानों को पपीता फलों की तुड़ाई वाली लम्बी अवधि तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। फसलों तथा अन्य उद्यमों की उपज अथवा उत्पादकता में वृद्धि अकेला ऐसा महत्वपूर्ण कारक है जिससे आमदनी बढ़ सकती है। ■

अंगूर की उन्नत बागवानी

अनुराग पटेल*, अभिजीत खाडत्कर* और **सी पी सावंत***

फल विशेषांक

अंगूर की खेती को विटीकल्चर कहते हैं। इसे बलवर्द्धक एवं सौन्दर्यवर्धक फल माना जाता है। इसलिए फलों में अंगूर उत्तम माना जाता है। अंगूर का उत्पत्ति स्थान मध्य एशिया (काला सागर और कोकेशियन समुद्र के बीच का क्षेत्र) है। विश्व में अंगूर भारत के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, फ्रांस, स्पेन, अर्जेंटीना, चीन, ईरान एवं ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में प्रमुख रूप से उगाया जाता है।

भारत में लगभग 139 हजार हैक्टर क्षेत्र में अंगूर की खेती की जाती है। इसका उत्पादन 2018 में लगभग 2921 हजार मिलियन टन हुआ था। यह बेलों पर बड़े-बड़े गुच्छों में होता है। इसका उपयोग तीन प्रमुख रूप में किया जाता है, (1) सीधे खाने के लिए, (2) सुखाकर किशमिश बनाने और (3) अंगूरी शराब/वाइन बनाने में। भारत में नासिक को अंगूर की राजधानी और देश से अंगूर के सबसे अच्छे निर्यातक के रूप में जाना जाता है। पिछले कुछ वर्षों से इस क्षेत्रफल में लगातार बढ़ोतरी हो रही है।

अंगूर के पोषक तत्व

अंगूर शक्तिवर्द्धक एवं सौन्दर्यवर्धक फल है। यह पोटेशियम का एक अच्छा स्रोत है, जो शरीर में तरल पदार्थ को संतुलित करने में मदद करता है। पोटेशियम, उच्च रक्तचाप को कम करने और हृदय रोग, स्ट्रोक के जोखिम को कम करने में मदद कर सकता है। अंगूर में कैलोरी, वसा, सोडियम, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, चीनी और प्रोटीन आदि पोषक तत्व पाये जाते हैं।

अनुकूलित जलवायु

अंगूर की खेती से लाभ के लिए गर्म, शुष्क तथा दीर्घ ग्रीष्म ऋतु सबसे अनुकूल रहती है। इसके लिए उपयुक्त तापमान 15-40 डिग्री सेल्सियस, वर्षा 500-600 मिमी., और 6.5-7.5 मिट्टी पी. एच. होना चाहिये। मौसम का फल के विकास तथा पके हुए अंगूर की बनावट, स्वाद और गुणों पर काफी असर पड़ता है। पकते समय बारिश या बादल का होना बहुत ही हानिकारक है। इससे फल फट जाते हैं और फलों की गुणवत्ता पर बहुत बुरा

100 ग्राम अंगूर में पोषक तत्वों की मात्रा

*भाकृअनुप- केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, नबीबाग, बैरसिया रोड, भोपाल (म.प्र.)-462038

असर पड़ता है। इसलिए उत्तर भारत में जल्दी पकने वाली किस्मों को लगाया जाता है।

भूमि का चयन

अंगूर की खेती के लिए कम से कम 4-5 हैक्टर भूमि होनी चाहिए। इसकी खेती विभिन्न प्रकार की मृदा में की जा सकती है। अंगूर की जड़ की संरचना काफी मजबूत होती है। अतः यह कंकरीली, रेतीली तथा चिकनी मिट्टी में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। रेतीली तथा दोमट मिट्टी, जिसमें जल निकास अच्छा हो, अंगूर की खेती के लिए उत्तम है। अधिक चिकनी मिट्टी में इसकी खेती नहीं की जा सकती है।

उन्नत किस्में

अंगूर की उन्नत किस्मों में प्रमुख रूप से ब्यूटी सीडलैस, परलेट, पूसा सीडलैस, पूसा उर्वशी, पूसा नवरंग और फ्लैट सीडलैस आदि शामिल हैं।

बेलों की रोपाई

3x3x3 मी. आकार के गड्ढे खोदने के बाद उन्हें 1/2 भाग मिट्टी, 1/2 भाग गोबर की सड़ी हुई खाद एवं 30 ग्राम क्लोरोपाईरीफॉस, 1 किग्रा. सुपर फॉस्फेट व 500 ग्राम पोटेशियम सल्फेट आदि को अच्छी तरह मिलाकर भर दिया जाता है।

खाद

मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए एवं लगातार अच्छी गुणवत्ता वाली फसल लेने के लिए अंगूर की बेलों की छंटाई के तुरंत बाद प्रत्येक पौधे में 200 ग्राम. पोटेशियम सल्फेट, 250 ग्राम. सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 250 ग्राम. अमोनियम सल्फेट प्रयोग किया जाता है। फल लगना शुरू होने के पश्चात 200 ग्राम. पोटेशियम सल्फेट की दूसरी खुराक भी दी जाती है। आयरन एवं जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए इनका 0.2 प्रतिशत की दर से छिड़काव किया जाता है।

बेलों की छंटाई

सामान्यतः कटाई एवं छंटाई जनवरी से फरवरी माह में की जाती है। छंटाई की प्रक्रिया में बेल के जिस भाग में फल लगे हों, उसके बढ़े हुए भाग को कुछ हद तक काट देते हैं। अंगूर की किस्म के अनुसार कुछ भाग को केवल एक अथवा दो आंख छोड़कर शेष को काट देना चाहिए। इन्हें रिनिवल स्पर कहते हैं। आमतौर पर जिन शाखाओं पर फल लग चुके हों, उन्हें ही रिनिवल स्पर के रूप में रखते हैं। छंटाई करते समय को हटा दें और बेलों पर ब्लाइटॉक्स 0.2 प्रतिशत का छिड़काव अवश्य करें।

सिंचाई

फूल आने तथा पूरा फल बनने तक पानी की जरूरत होती है, क्योंकि इस दौरान पानी की कमी से उत्पादन पर बुरा असर पड़ता है। इस दौरान तापमान तथा पर्यावरण स्थितियों को ध्यान में रखते हुए 7-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। फल पकने की प्रक्रिया शुरू होते ही पानी बंद कर देना चाहिए नहीं तो फल फट एवं सड़ सकते हैं। फलों की तुड़ाई के बाद भी एक सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिए।

सारणी:- अंगूर की बागवानी के लिए उपयोगी उन्नत यन्त्र एवं उनके कार्य

क्र.सं.	कार्य	उन्नत यन्त्र
1.	मिट्टी समतलीकरण	लेजर लैंड लेवलर, स्क्रेपर एवं पटेला आदि।
2.	बाग की जुताई	मोल्ड बोर्ड हल, तवेदार हल, कल्टीवेटर, हैरो एवं रोटावेटर आदि।
3.	कूंड़ की खुदाई	रेक, बेलचा, होल डिगर आदि।
4.	निराई एवं गुड़ाई	बागवानी कांटा, पॉवर टिलर, पॉवर वीडर आदि।
5.	मेड़ की बंधाई	बंड मेकर, फावड़ा, कुदाल आदि।
6.	दवा छिड़काव यन्त्र	डस्टर, फूड स्प्रेयर, हैण्ड स्प्रेयर, पॉवरचालित बूम स्प्रेयर आदि।
7.	खाद बुरकाव/छिड़काव यन्त्र	स्प्रेयर, खाद एप्लीकेटर, फार्म यार्ड मैन्योर एप्लीकेटर आदि।
8.	तने की छंटाई एवं फल की तुड़ाई	प्रूनिंग आरी, ट्रिमर आरी, कैंची, दरांती, प्रूनिंग नाइफ आदि।
9.	ढुलाई यन्त्र	पहिया ठेला, ट्रैक्टर ट्रॉली आदि।

तुड़ाई

अंगूर तोड़ने के बाद पकते नहीं हैं, अतः जब खाने योग्य हो जाएं अथवा बाजार में बेचना हो तो उसी समय इन्हें तोड़ना चाहिए। शर्करा में वृद्धि तथा अम्ल में कमी होना फल पकने के लक्षण हैं। फलों की तुड़ाई प्रातः काल या सायंकाल में करनी चाहिए। उचित कीमत लेने के लिए गुच्छों का वर्गीकरण करें। पैकिंग के पूर्व गुच्छों से टूटे एवं गले-सड़े दानों को निकाल दें। अंगूर के अच्छे रखरखाव वाले बाग से तीन वर्ष बाद फल मिलना शुरू हो जाते हैं और 20-30 साल तक फल प्राप्त किए जा सकते हैं। परलेट किस्म के 14-15 साल के बगीचे से 30-35 टन प्रति हैक्टर फल लिया जा सकता है। अंगूर की तुड़ाई महाराष्ट्र में अप्रैल, कर्नाटक में अप्रैल-जून और सितम्बर-अक्टूबर, मध्य प्रदेश में मार्च, अप्रैल, गुजरात में फरवरी, राजस्थान में मई और नवम्बर में की जाती है।

उत्पादन एवं भंडारण

भारत में अंगूर की औसत पैदावार लगभग 30 टन प्रति हैक्टर है। वैसे तो अंगूर की पैदावार किस्म, मिट्टी और जलवायु पर निर्भर होती है, लेकिन वैज्ञानिक तकनीक से खेती करने पर एक पूर्ण विकसित बाग से अंगूर की लगभग 30 से 35 टन पैदावार प्राप्त हो जाती है। कमाई की बात करें तो बाजार में इसका कम से कम भाव 50 रुपए किलो भी मानें और औसत पैदावार 30 टन प्रति हैक्टर मानें तो इसके उत्पादन से लगभग 15 लाख रुपए प्राप्त होते हैं। इसमें से यदि लागत निकाल दी जाये तो भी लगभग 8-10 लाख रुपए तक का लाभ होता है।

अंगूर के भण्डारण के लिए तापमान लगभग 2-3^{0}C से 18^{0}C तक रखा जाता है। इसकी सापेक्षिक आर्द्रता लगभग 65-70 प्रतिशत होनी चाहिए। अंगूर को 3-5 माह तक आसानी से भंडारित किया जा सकता है।

अंगूर की बागवानी के लिए उन्नत किस्म, उन्नत यंत्रों एवं नई तकनीक का उपयोग करके अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। मशीनों का उपयोग करके अंगूर की बागवानी में मजदूर पर निर्भरता में कमी लाकर, कम समय एवं कम श्रम से कृषि कार्य संपन्न करके उत्पादन एवं उत्पादकता को भी बढ़ाया जा सकता है।

आम की खेती से समृद्धि

लोगानन्दन एन.*, **जगदीश के.एन.***, **प्रशांत जे.एम.***, **पी.आर. रमेश*** और **सोमशेखर***

फल विशेषांक

भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान और कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा सुझाई गई विधियों को अपनाते हुए आम के उत्पादन एवं सस्योत्तर प्रबंधन से **श्री रेवणसिद्धय्या** को कम अवधि में ही दो लाख रुपए की आय प्राप्त हुई। अब वे अपने आसपास के गाँवों के अन्य किसानों को भी फसल के उत्पादन एवं प्रसंस्करण की वैज्ञानिक विधि को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं।

श्री रेवणसिद्धय्या कर्नाटक के तुमकुरु जिले के नेरलापुरा गाँव में आम उत्पादक हैं। इन्होंने दसवी तक पढ़ाई की है, तीन एकड़ के आम के बागान का देखभाल करते हैं। इनके दोनों बेटे शिक्षित हैं और तुमकूरु एवं होसकोटे में रहते हैं। प्रारंभिक वर्षों में श्री रेवणसिद्धय्या अपनी तीन एकड़ की सूखी जमीन में उपयुक्त खेती करने की खोज में थे। वर्ष 2003 में वे भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू के संपर्क में आए। वहां के वैज्ञानिकों की सलाह के अनुसार शुष्क क्षेत्रीय बागवानी के रूप में उन्होंने जुलाई 2004 में दो एकड़ में आम की अल्फॉन्सो किस्म के 74 कलम-बंधे पौधे लगाए। बाद

*भाकृअनुप-कृषि विज्ञान केन्द्र, हिरेहल्ली, तुमकूरु

आम की तुड़ाई

केवीके का मार्गदर्शन

वर्ष 2010 से कृषि विज्ञान केन्द्र, हीरेहल्ली ने हरी खाद के लिए अंतर्वती फसल के रूप में किवाँच उगाना, आम के एक समान आकार एवं अधिक पैदावार के लिए सूक्ष्मपोषक तत्व (आम स्पेशल) से पर्ण छिड़काव और आम की फल मक्खियों के नियंत्रण के लिए फेरोमोन जाल का उपयोग, जैसे कुछ तकनीकी परीक्षणों के द्वारा उनकी मदद की । उनको सलाह दी कि आम स्पेशल (75 कि.ग्रा. आम स्पेशल चूर्ण + मध्यम आकार के दो नीबू + 15 लीटर पानी में एक शैम्पू का पाउच) का उपयोग पूरे बागान में मासिक अंतराल पर करें। उन्हें फल मक्खी जाल बनाने की विधि सिखाई गई और उन्होंने 2 एकड़ में 12 जाल लगाए।

में वर्ष 2011 में उन्होंने अपनी जमीन से सटी एक और एकड़ जमीन खरीदी। वहाँ पर भी आम की खेती प्रारंभ की गई। वर्ष 2009 तक वे भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के संपर्क में रहे और 2010 से उन्हें कृषि विज्ञान केन्द्र, हिरेहल्ली, तुमकूरू के बारे में पता चला।

इन कृषि क्रियाओं में प्रति वर्ष 60 कि. ग्रा. गोबर की खाद का आवरण के रूप में प्रयोग और जड़क्षेत्र पर 5 कि. ग्रा. तेल खली के मिश्रण (नीम, करंज, मूँगफली) का प्रयोग शामिल है। अतिरिक्त एक एकड़ में उन्होंने प्रति वर्ष 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद और तेल खली के मिश्रण का आधा भाग डाला। उन्होंने गर्मी के दिनों में सिंचाई की भी व्यवस्था की। वे दस दिन में एक बार प्रत्येक पेड़ को 40 लीटर पानी देते थे।

वर्ष 2010 में पहली बार में ही उन्हें 480 कि.ग्रा. की उपज प्राप्त हुई। तब एक ठेकेदार ने उनसे संपर्क किया और पूरे बागान के लिए उन्होंने रु. 8000/- देने का वादा किया। लेकिन श्री रेवण्णसिद्धय्या ने आम को खुद बेचने का निर्णय लिया। वे सदाशिव

आम की बहार

आम की फसल दिखाते श्री रेवण्णसिद्धय्या

नगर, बेंगलुरू के एक चिकित्सक डॉ. राजेन्द्र केनी के संपर्क में आए। डॉ. राजेन्द्र केनी, श्री रेवण्णसिद्धय्या के आम की गुणवत्ता से परिचित थे, जो परंपरागत विधि से धान पुआल का उपयोग करते हुए, बिना कैल्शियम कार्बाइड के पकाए गए थे। प्रारंभ में उन्होंने बाजार की कीमत पर आम को बेचा। लेकिन जब ग्राहकों ने श्री रेवण्णसिद्धय्या के नेलारपुरी आम का स्वाद चखा, वे उसी आम की मांग करते हुए दुबारा आ गए, क्योंकि वे आम फल मक्खियों से मुक्त थे और स्वादिष्ट भी थे। ग्राहकों ने खुद अच्छी कीमत देने का बादा किया। ऐसे श्री रेवण्णसिद्धय्या ने एक अच्छा बाजार पाया और उन्होंने सीधे डॉक्टर महोदय के पारिवारिक सदस्यों और दोस्तों को बेचना प्रारंभ किया। इस प्रकार श्री रेवण्णसिद्धय्या ने नियमित तौर पर अच्छी कीमत में आम बेच दिया। उस वर्ष उन्हें रु 40,000/- की आय प्राप्त हुई, जो ठेकेदार द्वारा वादा की गई राशि से पाँच गुना ज्यादा थी। अब ग्राहक प्रति वर्ष अच्छे आम के लिए श्री रेवण्णसिद्धय्या को संपर्क करते हैं।

वर्ष 2011 के दौरान उपज 2400 कि. ग्रा. थी। इस बार चयनित 1020 कि.ग्रा. आम का श्रेणीकरण किया गया और पैक करके रु. 500/- बक्सा (6 कि.ग्रा.) की दर से बेच दिया गया। शेष बचे 1380 कि.ग्रा. को ठेकेदार को रु. 25,000/- में बेच दिया। श्री रेवण्णसिद्धय्या को श्रेणीकरण कर बेचे आम से रु. 85,000/- की आय प्राप्त हुई। प्रति वर्ष उपज भी बढ़ने लगी, लेकिन 2013 तक प्रति बक्से की कीमत रु. 500/- निर्धारित की गई।

वर्ष 2014 में पिछले वर्षो की तुलना में आम कम लगे तथा कीमत भी कम थी। फिर भी उन्हें रु. 1,20,000/- की आय प्राप्त हुई। कृषि विज्ञान केन्द्र ने उन्हें आम को पकाने की कम लागत का कक्ष प्रदान किया। यह प्लास्टिक पाइप एवं पॉलीथीन शीट से बनी एक छोटी एक घन मीटर की संरचना थी। आम (लगभग 8 टोकरियाँ-1250 फल) को इस कक्ष में 24 घंटे तक रखा जाता है। एक घन मीटर की संरचना में केवल 75 प्रतिशत स्थान ही फलों के लिए आवश्यक है। कक्ष के अंदर एक कटोरी में ईथाइलीन घोल (2%) और सोडियम हाइड्रॉक्साइड (0.5ग्रा.) रखा जाता है। नियंत्रित धूमीकरण तकनीक से पकने की प्रक्रिया जल्दी होती है और कैल्शियम कार्बाइड के उपयोग का खतरा भी दूर होता है। परंपरागत विधियों में पकने और रंग बदलने में 10 दिन लगते हैं। लेकिन इस कक्ष का उपयोग करते हुए 24 घंटे के बाद फलों को बाहर निकाल दिया जाता है और पाँच दिनों के अंदर वे एक समान रंग के हो जाते हैं। निर्धारित अवधि तक रखने के बाद श्री रेवण्णसिद्धय्या ने आम को निकालकर बक्सों में पैक किया। उन्होंने 200 बक्से बेच दिए (प्रति बक्से में 6 कि.ग्रा. और कुल 1200 कि.ग्रा.)। उन्होंने रु. 100/- प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से आम बेचा, जो उस समय अल्फॉन्सों की मौजूदा कीमत से ज्यादा थी। बेंगलुर ले आने के लिए उन्होंने रु.1400/- प्रति ट्रिप के लिए खर्च किया और प्रत्येक ट्रिप में वे 100 बक्से लाए। इस प्रकार भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान और कृषि विज्ञान केन्द्र की आसान तकनीकों का उपयोग करते हूए आम के उत्पादन एवं विक्रय से उन्होंने लाभ कमाया और अपनी आजीविका में सुधार लाये। ■

(साभार:- बागवानी पत्रिका अंक-7)

वर्षा की फुहार, बागों में लाई बहार

हरे कृष्णा*, **अरविंद कुमार सिंह**** और **रामकेश मीणा*****

हमारा देश, विश्व का सबसे बड़ा वर्षा आधारित कृषि प्रधान देश है। यहां की लगभग 61 प्रतिशत कृषक आबादी, दो-तिहाई पशुधन और लगभग 84 प्रतिशत ग्रामीण जनजातीय आबादी अपने जीवनयापन हेतु वर्षा पर ही निर्भर रहती है। मई-जून की गर्मी से तप्त धरा पर जब वर्षा की बूंदें पड़ती हैं, तो अनुर्वर पड़ी भूमि में भी चेतना का संचार होने लगता है। जुलाई-अगस्त (सावन-भादो) में होने वाली वर्षा पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मनुष्य सभी में नूतन उत्साह उत्पन्न करती है। मानसून के आगमन से जनमानस का मन मयूर हर्षित हो उठता है। विशेषकर कृषक मित्रों का, जिनके लिए इस वर्षा का अनन्य महत्व है।

फल विशेषांक

इस द्विमाही बागों में होने वाली कृषि क्रियाओं का भी विशेष महत्व हो जाता है। जहां एक ओर बागों में जल निकासी की पर्याप्त व्यवस्था का होना आवश्यक है, वहीं दूसरी ओर फल-वृक्षों के बागों में खरपतवारों, विभिन्न रोगों एवं कीटों का प्रकोप भी बढ़ जाता है। इस द्विमाही आम, खजूर, नीबू, अंगूर, सेब इत्यादि फलों को बाजार भेजने के साथ ही सदैव हरे रहने वाले फल-वृक्षों के नये बागों को लगाने का कार्य भी समाप्त करना होता है। विभिन्न फल-वृक्षों के बागों में इस समय किए जाने वाले कृषि कार्यों का समुचित विवरण प्रस्तुत है।

आम

इस द्विमाही मध्यम पकने वाली किस्मों के फलों को तोड़कर बाजार भेजने की समुचित व्यवस्था करें। फलों को 10 मिमी डंठल के साथ प्रातःकाल अथवा संध्याकाल में तोड़ना चाहिए। तुड़ाई के तुरंत पश्चात डिसैपिंग (डंठल से निकलने वाले स्राव को पृथक करना) करना चाहिए जिससे फलों की गुणवत्ता बनी रहती है। तुड़ाई उपरांत फलों का श्रेणीकरण कर कटे-फटे खराब फलों को अलग कर लेना चाहिए। फलों के परिपक्वन में एकरूपता लाने के लिए उन्हें ईथरेल 700 पीपीएम + कार्बेण्डाजिम 500 पीपीएम के 52±1 डिग्री सेल्सियस गुनगुने पानी के घोल में 5 मिनट के लिए उपचारित करना चाहिए। बौनी किस्मों में फसल की तुड़ाई सिकेटियर द्वारा तथा ओजस्वी किस्मों में 'मैंगो हार्वेस्टर' का उपयोग करना चाहिए। फलों को बांस की टोकरियों, प्लास्टिक क्रेट्स या कार्टन बक्सों में पैक करके बाजार भेजा जा सकता है। बांस की टोकरियों में फल डालने से पूर्व उसमें कागज, जूट के बोरे या अन्य किसी उपयुक्त पैकिंग वस्तु की तह लगा दें ताकि फलों को घर्षण से कोई क्षति ना हो। कार्टन बक्सों में ऊर्ध्वाधर विभाजकों एवं पार्श्व संवातन छिद्रों की व्यवस्था होनी चाहिए।

तनाछेदक और पत्तियों को हानि पहुंचाने वाले कीटों से रोकथाम के लिए डेल्टामेथ्रिन (0.2 प्रतिशत) अथवा मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव करें। जुलाई के दूसरे पखवाड़े में फलों की तुड़ाई के बाद प्रति वृक्ष 500 ग्राम की दर से नाइट्रोजन देनी चाहिए। एन्थ्रेक्नोज से बचाव के लिए 0.125 प्रतिशत (125 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) ब्लिटॉक्स के घोल का छिड़काव करें। यदि बरसात पर्याप्त हो तो मई-जून में खोदे गए गड्ढों में रोपाई का कार्य भी इसी माह शुरू किया जा सकता है। ध्यान रहे कि रोपाई का कार्य सायंकाल अथवा जिस दिन हल्की-हल्की बरसात हो रही हो, उसी दिन करना चाहिए। आम के पौधों को प्रायः 10x10 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है, किन्तु सघन बागवानी में

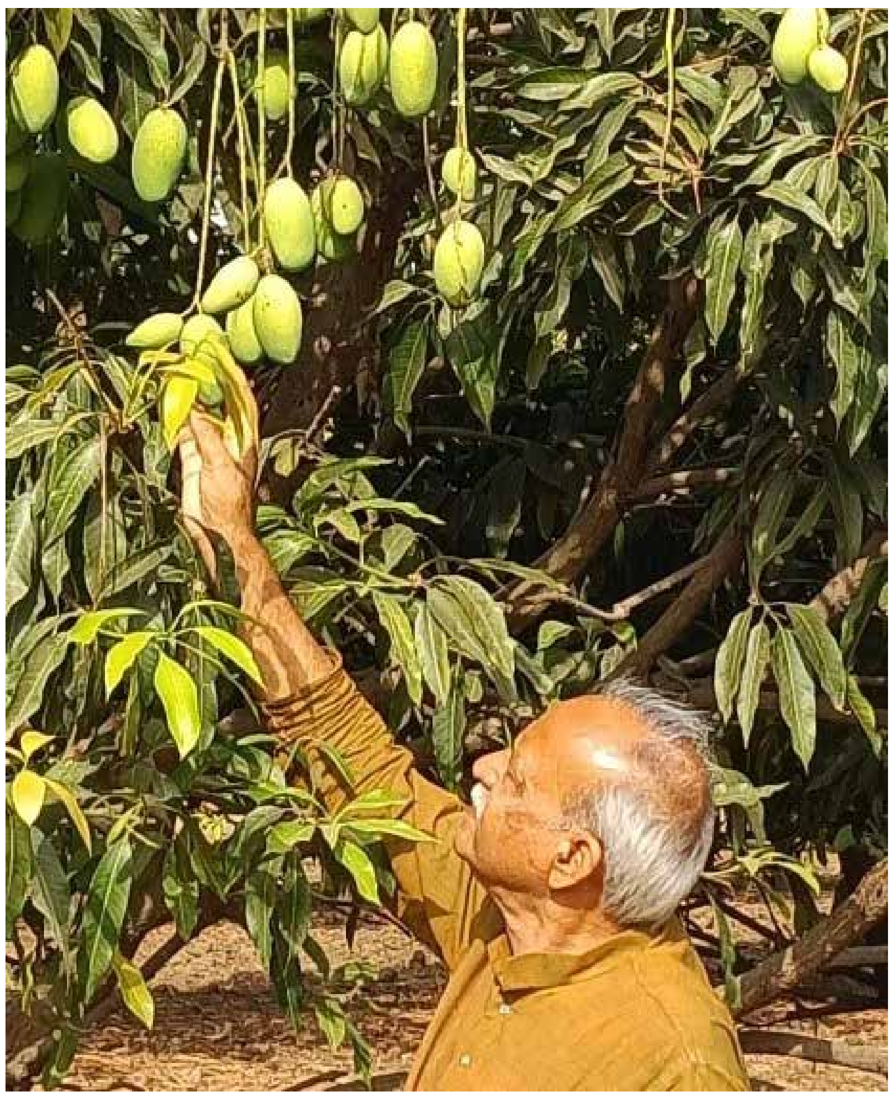

जी ललचाते आम

*भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, **केंद्रीय बागवानी परीक्षण केंद्र, (केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान), वेजलपुर (गोधरा), गुजरात,***भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीछवाल, बीकानेर

केले में करें जल निकासी

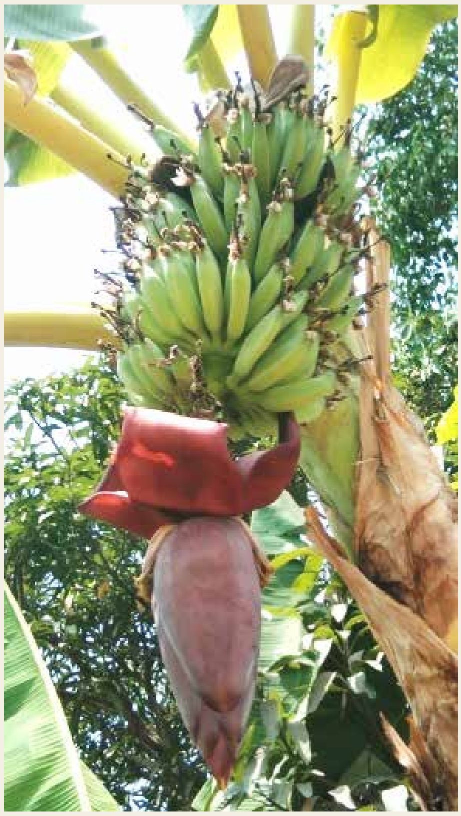

जुलाई में पौधों से अवांछित पत्तियों को निकाल दें। पौधों के तनों के चारों ओर यदि मिट्टी नहीं चढ़ाई गई हो तो जुलाई के प्रारंभ में यह कार्य अवश्य पूरा कर लें जिससे जल निकास का उचित प्रबंधन हो सके। जिन पौधों में फल लगे हों उन्हें बांस से बांधकर सहारा देना लाभप्रद रहता है। नए बाग लगाने का कार्य भी इस माह किया जा सकता है। इसके लिए तलवार की शक्ल के अंत:भूस्तारी अच्छे समझे जाते हैं। अंत:भूस्तारियों को रोगमुक्त मातृ पौधों से ही चयनित करें। भूस्तारी 3-5 माह पुराने, आकार में एक समान एवं छोटी अवधि वाली किस्मों जैसे नेन्द्रन, रस्थाली, पूवन, नेय पूवन हेतु वजन में 1-1.5 किलोग्राम के तथा लंबी अवधि वाली किस्मों, कर्पूरवल्ली व लाल केला के लिए, 1.5-2.0 किलोग्राम के होने चाहिए। यदि रोपण हेतु सूक्ष्म प्रवर्धित पौधों को लेना है तो 30 सेंमी. लंबे द्वितीयक सुदृढ़, पांच सेंमी. मोटाई लिए कम से कम 5 पूरी तरह से खुले हुए स्वस्थ पत्तों वाले पौधों का ही चुनाव करें। चयनित भूस्तारियों के किसी भी सड़े हुए भाग को हटाने के लिए सतही परतों के साथ-साथ सभी जड़ों को भी खुरच दिया जाना चाहिए। फ्यूजेरियम म्लानि रोग से बचाव हेतु रोगनिरोधी उपाय के रूप में 0.2 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम के घोल में छिले हुए भूस्तारियों को 15-20 मिनट तक डुबोकर रखें। उपचारित पौधों को रातभर छाया में रखें तथा अगले दिन रोपण करें।

इसे 2.5x2.5 अथवा 5x5 मीटर (आम्रपाली) या 3x2.5 मीटर (दशहरी) की दूरी पर लगाते हैं। पूर्व में ही रोपण हेतु खुदे गड्ढे के केंद्र में कलमी पौधों को रोपित करें। रोपाई के बाद पौधों के चारों तरफ की मिट्टी को अच्छी तरह से दबा दें। ध्यान रखें कि पौधों की जड़ से लगी मिट्टी को क्षति न हो और कलम बंधन संधि भूमि के ऊपर रहे। रोपण के तुरंत पश्चात हल्की सिंचाई करें। नया बाग लगाते समय दो या तीन किस्मों को साथ लगाया जाए, क्योंकि उत्तरी भारत की प्रमुख किस्मों जैसे दशहरी, लंगड़ा, चौसा बाम्बे ग्रीन आदि में स्व-अनिषेचन की समस्या पाई जाती है। किस्मों में यह समस्या होती है इनके फूल के पुंकेसर द्वारा पैदा किए हुए परागकण अपने ही स्त्रीकेसर को निषेचित नहीं कर सकते, जिससे उनमें फल नहीं लगते। परंतु दूसरी किस्म के परागकण निषेचित कर देते हैं। अत: ऐसी स्थिति में एक ही किस्म का बाग लगाया जाए तो वे बाग फलरहित रह जाते हैं। इस समस्या के निवारण हेतु दशहरी के बाग में बाम्बे ग्रीन व लंगड़ा और चौसा के बाग में दशहरी, सफेदा और मलीहाबादी किस्मों का लगाना ही लाभदायक रहता है। यह माह विनियर कलम द्वारा पौधों को तैयार करने के लिए सबसे उपयुक्त है।

अगस्त माह में पछेती पकने वाली किस्मों के फलों की तुड़ाई करें तथा श्याम व्रण (एन्थ्राक्नोज) से बचाव के लिए ब्लिटॉक्स का दूसरा छिड़काव करें। वृक्षों में गोंदार्ति की समस्या हो तो कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) + बुझा हुआ चूना (0.1 प्रतिशत) + बोरेक्स (0.4 प्रतिशत) मिश्रण के घोल का ऊपर से छिड़काव करें। तराई क्षेत्रों में गांठ बनाने वाले कीटों से बचाव हेतु मोनोक्रोटोफॉस 0.05 प्रतिशत अथवा डाइमेथोएट 0.06 प्रतिशत का छिड़काव करें। अगले वर्ष में नए पौधे तैयार करने के लिए मूलवृंत हेतु फलों की गुठलियों को एकत्रित करके पौधशाला में बो दें। यदि जुलाई में किसी कारणवश विनियर कलम न की जा सकी हो तो अगस्त में कलम करना न भूलें।

पपीते का बाग

पपीते की नर्सरी

जुलाई में मैदानी क्षेत्रों के बागवान पपीते की पौध तैयार कर सकते हैं। किसी अच्छी किस्म का बीज चयन करके उन्हें किसी कवकनाशी से उपचारित करें। उपचारित बीजों को ऊंची उठी हुई क्यारियों में बोना चाहिए। पौधशाला में बीजों/पौधों को आर्द्रपतन रोग से बचाने के लिए क्यारियों को बुआई से 15 दिन पहले ही 2.5 प्रतिशत फार्मेल्डिहाइड के घोल से उपचारित करने के 48 घंटे बाद पॉलीथीन से ढककर कीटाणुरहित कर लें। पुराने बाग खरपतवार रहित होने चाहिए तथा उनमें जल निकास की अति उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लिटॉक्स (0.3 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव पौधों के तनों एवं थालों में अवश्य करें एवं पौधों के तनों के चारों ओर मिट्टी चढ़ा दें। बीजों के अंकुरण के बाद थीरम (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें। उद्यान में जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

आंवला में कीट-व्याधि का प्रबंधन

इस द्विमाही आंवले का रस्ट रोग एक महत्वपूर्ण समस्या है। इसके नियंत्रण के लिए घुलनशील गंधक 0.4 प्रतिशत या

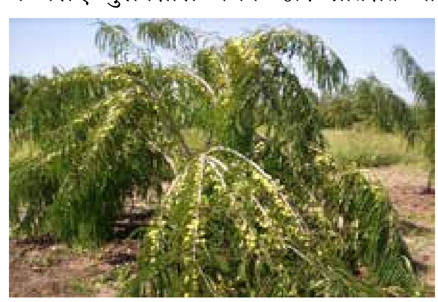

फलों से लदा आंवले का वृक्ष

अमरूद की देखभाल

जुलाई माह, बाग में रोपण, रिक्त स्थानों की पूर्ति एवं पौधे तैयार करने के लिए आदर्श होता है। गूटी या कलम से तैयार अमरूद के पौधों को मृदा गेंद के साथ 45x45x45 सें.मी. के पहले से खुदे गड्ढों के बीचों-बीच रोपित करना चाहिए। रोपित पौधों को तुरंत सिंचित करना चाहिए। तत्पश्चात तीसरे दिन और फिर प्रत्येक 10 दिनों के अंतराल पर अथवा आवश्यकतानुसार पानी देना चाहिए। श्यामव्रण रोग को नियंत्रित करने के लिए, कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर का फलों पर और बोर्डो मिश्रण (3:3:50) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर का तनों तथा पत्तियों पर छिड़काव करें। पुराने या स्थापित बगीचों में 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें। बाग में कीटों का प्रकोप होने पर क्विनाल्फोस 25 ईसी का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर या नीम तेल का 3 प्रतिशत की दर से 21 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। सर्दियों के मौसम वाली फसल के लिए, फूल आने से पहले 0.4 प्रतिशत बोरिक एसिड का छिड़काव करें, जिससे फलों के आकार और उपज में वृद्धि हो सकती है। फलों के वर्तिकाग्र सड़न की रोकथाम के लिए कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर का फलन से पहले छिड़काव करें। हालांकि, ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई भी छिड़काव तुड़ाई के 15 दिन पहले नहीं किया जाए।

अगस्त माह में, फल मक्खी के प्रकोप को कम करने के लिए गिरे हुए तथा ग्रसित फलों को नष्ट कर देना चाहिए। छेदक कीटों से भी अमरूद के बागों को काफी क्षति होती है। इससे बचाव के लिए बागों में नियमित रूप से कीटों को एकत्रित कर उन्हे नष्ट कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त, कीटनाशकों का फलन के समय या फलों के पकने से पहले छिड़काव करें। सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, लौह, ताँबा, मैंगनीज इत्यादि के मिश्रण का भी 2 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से पौधे पर छिड़काव करें। म्लानि अथवा विल्ट से पौधों को बचाने के लिए उद्यान में निरंतर साफ-सफाई करते रहें। इसके अतिरिक्त, नीम खली, जैविक खाद इत्यादि का भरपूर प्रयोग करें एवं बाग में जलनिकासी की समुचित व्यवस्था से सुनिश्चित करें।

क्लोरथैलोनिल 0.2 प्रतिशत के तीन छिड़काव एक माह के अंतराल पर जुलाई से करने पर रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है। श्यामव्रण, आँवले की पत्तियों व फलों पर अगस्त माह से दिखाई देना प्रारम्भ हो जाता है। इसके प्रबंधन हेतु, कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत का, तुड़ाई से 15 दिन पूर्व छिड़काव करें। जुलाई-अगस्त माह में गुठली छेदक का प्रकोप भी देखा जा सकता है। इसके नियंत्रण के लिए क्विनाल्फॉस या सेविन का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। जुलाई-अगस्त माह में आंवला के बीजों की बुआई कर सकते हैं तथा अंकुरित पौधों को एक महीने बाद क्यारियों में स्थानांतरित किया जा सकता है जहां ये अगले वर्ष जुलाई तक प्रवर्धन के लिए तैयार हो जाते हैं। जुलाई-अगस्त माह में ही आंवला में पैबंदी कलिकायन या विरूपित छल्ला विधि द्वारा प्रवर्धन किया जा सकता है। सांकुर शाखा का चुनाव ऐसे मातृवृक्ष से करना चाहिए जो अधिक फलत देने वाला हो और कीटों एवं व्याधियों के प्रकोप से मुक्त हो। जुलाई-अगस्त के महीने में ही कलिकायन द्वारा तैयार पौधों को 8-10 मीटर (किस्म के अनुसार) की दूरी पर उद्यान में रोपित कर सकते हैं। नाइट्रोजन की आधी मात्रा जुलाई-अगस्त के महीने में आंवला में डालनी चाहिए।

खजूर में प्रवर्धन व रोपण

खजूर को बीज से भी तैयार किया जाता है परंतु इसके एकलिंगी होने से बीज से तैयार किये पौधों में नर व मादा का अनुपात 50:50 रहने की सम्भावना रहती है। ऐसे पौधों में फल देरी से आते हैं व उपज में भी असमानता रहती है। इस कारण खजूर के पौधों का प्रवर्धन अच्छी गुणवत्ता वाले मातृ वृक्षों से सकर्स (अंत:भूस्तारी) द्वारा किया जाता है। इस द्विमाही के दौरान, मातृवृक्ष से निकले भूस्तारियों में जड़ विकसित करने के लिए उन पर मिट्टी चढ़ा सकते हैं। अगले वर्ष तक अंत:भूस्तारी मातृवृक्ष से अलग करने योग्य हो जाते हैं। अलग करने के एक-दो दिन पहले खेत में पानी अवश्य लगाएं। अलग करने से पहले अंत:भूस्तारी की पत्तियों को उनके शीर्ष भाग से लगभग 30 सेंटीमीटर ऊपर से काट दें तथा पत्तियों की बची हुई शाखाओं को मिलाकर रस्सी से बांध दें। तत्पश्चात उसके पास की मिट्टी को हटाकर उनको मातृवृक्ष से जोड़ के स्थान से काटकर अलग कर दें। पूर्व में तैयार किए गड्ढों में 8x8 मीटर की दूरी पर रोपाई करें। रोपण हेतु 8-10 किलोग्राम के अंत:भूस्तारियों का चुनाव करना चाहिए। इस द्विमाही, खजूर में फलों की तुड़ाई का कार्य होता है। चूंकि, वर्षा प्रारम्भ होने के कारण खजूर पूरी तरह से नहीं पक पाते हैं, अत: उन्हे डोका अथवा प्रारम्भिक डांग अवस्था पर तोड़ लेना चाहिए। वातावरण में नमी के कारण तोड़े हुये फलों में फफूंद लगने की आशंका रहती है। इसलिए उन्हे शीघ्रातिशीघ्र प्रसंस्करण के लिए ले जाना चाहिए। छुहारा बनाने के लिए पूर्ण डोका फलों को अच्छी प्रकार से धोने के पश्चात 5-10 मिनट गर्म पानी में उबालकर धूप में अथवा ड्रायर में 40-45 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 80-120 घंटों के लिए सुखाएं।

तुड़ाई के लिए तैयार खजूर

अनार

जुलाई-अगस्त माह में पौध रोपण करना चाहिए तथा रोपण के तुरंत बाद सिंचाई कर

अनार में कर्तन द्वारा प्रवर्धन

लें। मृग बहार हेतु, अनार के पौधों में दिये जाने वाले गोबर की खाद तथा फॉस्फोरस की पूरी एवं नाइट्रोजन और पोटाश की आधी मात्रा जुलाई माह में दे देनी चाहिए। खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग छत्रक के नीचे चारों ओर 8-10 सेंमी. गहरी खाई बनाकर करना चाहिए। यदि गूटी द्वारा अनार का प्रवर्धन करना हो तो जुलाई-अगस्त माह में एक वर्ष पुरानी पेन्सिल समान मोटाई वाली स्वस्थ, ओजस्वी, परिपक्व, 45-60 सें.मी. लम्बाई की शाखा का चयन कर लेना चाहिए। चुनी गई शाखा से कलिका के नीचे 3 सें.मी. चौड़ी गोलाई में छाल को पूर्णरूप से अलग कर देना चाहिए। छाल निकाली गई शाखा के ऊपरी भाग में आई.बी.ए. 10000 पी.पी.एम. का लेप लगाकर नमीयुक्त स्फेगनम मॉस चारों ओर लगाकर पॉलीथीन शीट से ढककर सुतली से बाँधना चाहिए। तत्पश्चात जब पॉलीथीन से जड़ें दिखाई देने लगें उस समय शाखा को काटकर क्यारी में स्थापित कर लें। यह द्विमाही, कर्तन विधि द्वारा अनार के पौधे तैयार करने के लिए भी उपयुक्त है। तेलिया रोग से संक्रमित क्षेत्रों में मृग बहार नहीं ली जानी चाहिए, अन्यथा जुलाई से अगस्त के दौरान रासायनिक जैवनाशियों, सलिसिलिक अम्ल, बोरॉन, कैल्शियम इत्यादि का नियमित रूप से प्रयोग करना पड़ेगा। यदि उद्यान में माहू कीट का प्रकोप हो तो प्रोफेनाफॉस-50 का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अधिक प्रकोप होने की स्थिति में इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। जुलाई माह में पौधों पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का छिड़काव भी करें। अनार में फलों का फटना एक गंभीर समस्या है, जोकि शुष्क क्षेत्रों में अधिक होती है। इसके प्रबंधन हेतु, नियमित रूप से सिंचाई करें एवं जिब्रेलिक अम्ल (जी.ए. 3) 15 पी.पी.एम. तथा बोरॉन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें। अगस्त माह में हस्त बहार हेतु पौधे को पानी देना रोक दें तथा इथरेल का उपयोग भी करे। पौधे के चारों ओर गोबर की खाद, नीम की खली, फॉस्फोरस व पोटाश की मात्रा जड़ क्षेत्र में 8-10 सेंमी. की नालियाँ बनाकर दें।

लीची

जुलाई में पेड़ के नीचे की जमीन को हमेशा साफ रखें एवं जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। नए बाग लगाने और गूटी द्वारा पौधे तैयार करने का कार्य भी बागवान इसी माह शुरू कर सकते हैं। जुलाई में पौधों में खाद व उर्वरक की समुचित व्यवस्था करें। यदि जुलाई में गूटी ना बांधी गई हो तो यह कार्य अगस्त में समाप्त कर लें तथा बाग को खरपतवारों से मुक्त रखें। पुराने बागों में तना छेदक कीट की समस्या रहती है। अगस्त में इस कीट की रोकथाम के लिए लीची में सुझाई गई विधि का प्रयोग करें। इन्हीं दिनों गूटी द्वारा तैयार किए गए पौधों को पौधशाला में अवश्य लगाएं।

अंगूर

जुलाई में मध्यम या देर से पकने वाली किस्मों के फलों की तुड़ाई के बाद बाजार में भेजने की व्यवस्था करें। इस माह में फलों के फटने व सड़ने की समस्या आती है। अत: ब्लिटॉक्स (0.3 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव अवश्य करें। इसी दौरान फलों को चिड़ियों एवं बर्रों से बचाना चाहिए। फलों को चिड़ियों से बचाने के लिए चमकीले रिबन (पट्टियां) का उपयोग करना चाहिए या गुच्छों में हरी थैलियां लगा दें। बर्र के छत्तों को नष्ट करने का उपाय करें। फलों की तुड़ाई के बाद खाद व उर्वरक देने की व्यवस्था करें। अगस्त में एन्थ्रेक्नोज रोग का भय रहता है। अत: समय रहते ही इसकी रोकथाम के लिए बाविस्टिन 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

लोकाट में करें आवश्यक काट-छांट

जुलाई में काट-छांट का कार्य समाप्त कर लेना चाहिए। पेड़ों के नीचे की जमीन साफ कर बाग को खरपतवार रहित रखें। अगस्त में गूटी बांधने का कार्य समाप्त कर लें। इसी माह नए बाग लगाने का कार्य भी कर सकते हैं।

बेर

जून में काट-छांट के बाद यदि नाइट्रोजन किसी कारणवश न दी जा सकी हो तो उसे जुलाई में अवश्य दें। बाग में जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। पौधशाला में बीजू पौधे तैयार करने के लिए यदि बुआई न की जा सकी हो तो इसे जुलाई में अवश्य करें। यदि पेड़ों पर चूर्णिल रोग के लक्षण दिखें तो केराथेन 0.1 प्रतिशत के दो छिड़काव अगस्त में अवश्य करें।

सेब की तुड़ाई

जल निकास की समुचित व्यवस्था के साथ अगेती पकने वाली किस्मों को तोड़कर बाजार में भेजने की व्यवस्था करें। कज्जली धब्बा का प्रकोप होने पर डाइथेन-जेड 78 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव लाभप्रद रहता है। यदि तना कैंकर का प्रकोप हो तो प्रभावित शाखा को थोड़े स्वस्थ भाग सहित काट कर जला दें। खुले भाग या पूरे वृक्ष पर बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करें। इसी माह नए पौधे तैयार करने के लिए कलम चढ़ाएं। अगस्त

तुड़ाई को तैयार सेब

कटहल

जुलाई में तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की समुचित व्यवस्था करें। बागों में समुचित जल निकास का प्रबंध होना चाहिए। नए बाग लगाने का कार्य भी इसी माह प्रारंभ कर दें। अगस्त में नर्सरी तैयार करने के लिए बीजों को फलों से निकाल कर पौधशाला में बोएं। गूटी द्वारा पौधे तैयार करने का भी यही उत्तम समय है।

कटहल से लदा वृक्ष

नीबूवर्गीय फलों का प्रबंधन

जुलाई में नींबू व लाइम के फल पककर तैयार हो जाते हैं, उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। इसी माह नया बाग लगाने का कार्य भी कर सकते हैं। कैंकर रोग से छुटकारा पाने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में और नीम की खली 5 किलो/100 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। जल निकास की उचित व्यवस्था करें। रोपाई का कार्य यदि जुलाई में न हो सका हो तो अगस्त में इसे पूरा करें। पर्णसुरंगी कीट से बचाव के लिए पौधशाला में रोगोर या मेटासिस्टॉक्स 300मि.ली./100लीटर पानी का छिड़काव करें। फलों का तुड़ाई-पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। अत: अगस्त में 10 पी.पी.एम. 2,4डी 1ग्राम प्रति 100 लीटर पानी का छिड़काव अवश्य करें। सितम्बर में नाइट्रोजन की तीसरी मात्रा पौधों को अवश्य दें। इन फल वृक्षों में लगभग सभी सूक्ष्म तत्वों की विशेष कमी पाई जाती है। इनकी पूर्ति के लिए जिंक सल्फेट, मैग्नीशियम सल्फेट, बोरिक अम्ल, बुझा हुआ चूना प्रत्येक एक किलोग्राम/450 लीटर पानी आदि के संयुक्त घोल का छिड़काव करें। इस घोल में यदि 5 कि.ग्रा. यूरिया डाल लें तो यह नाइट्रोजन की कमी को पूरा करता है।

रसीले नीबू

में डिलिशियस किस्म पककर तैयार हो जाती हैं। उन्हें अच्छी एवं सुंदर पैकिंग कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। रूईया एवं सेंजोस स्केल आदि कीटों की रोकथाम के लिए सितम्बर में मेटासिस्टॉक्स (0.5 प्रतिशत) का छिड़काव करें। फलों को तुड़ाई-पूर्व गिरने से रोकने हेतु 20 पी. पी.एम. नेफ्थेलीन एसिटिक अम्ल (2 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव अगस्त में अवश्य करें।

नाशपाती, आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा

नाशपाती के बीजू पौधों पर भेंट कलम जुलाई में चढ़ानी चाहिए। इसी माह आड़ू, खुबानी और आलूबुखारा आदि के फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। कज्जली धब्बों की रोकथाम के लिए नाशपाती एवं अन्य फलों में डाइथेन जेड-78 (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा में भूरा सड़न रोग की रोकथाम के लिए बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। अगस्त में नाशपाती के फलों को तोड़कर भेजने की व्यवस्था करें एवं फल सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लिटॉक्स (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें।

सेहत से भरे आड़ू

शरीफा को खरपतवारों से बचाएं

जुलाई माह में अच्छी किस्म के कलमी पौधों को बागों में रोपित करें तथा सिंचाई की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करें। अगस्त माह में खरपतवारों को निकालने की व्यवस्था करें। इस माह में ही पलवार लगाने की भी व्यवस्था करें ताकि मृदा में नमी संरक्षित की जा सके। मूलवृंत से निकली पार्श्व शाखाओं को समय-समय पर निकालते रहें तथा पौधों को उचित आकार देने के लिए निचली शाखाओं को 2-3 फीट तक छांट दें।

स्ट्रॉबेरी की रोपाई

पहाड़ों में स्ट्राबेरी के पौधे जुलाई-अगस्त में लगाए जा सकते हैं। यदि समुचित बरसात न हो तो क्यारियों में पानी की उचित व्यवस्था करें और सितम्बर में उचित पलवार (मल्च) की व्यवस्था करें। खेत की अच्छी तरह जुताई

मनोहारी स्ट्रॉबेरी

करके, गोबर आदि खाद मिलाकर 6x1x15 मी. आकार की क्यारियां बना लें एवं 15x15 या 15x30 या 30x30 सेंमी. की दूरी पर पौधे लगाएं।

यह रही बातें वर्षा ऋतु में बागों में किए जाने वाले कृषि कार्यों की। इस द्विमाही किए जाने वाली कृषि कार्यों का बहुत महत्व है पर इसका यह मतलब नहीं कि आने वाली द्विमाही में ढिलाई बरती जाए। सफल फलोत्पादन के लिए बागों में कृषि कार्य अनवरत रूप से चलते रहना चाहिए। **फल फूल** के अगले अंक में सितंबर-अक्टूबर में किए जाने वाले आवश्यक कृषि कार्यों को लेकर आपके समक्ष पुन: प्रस्तुत होंगे। ■

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

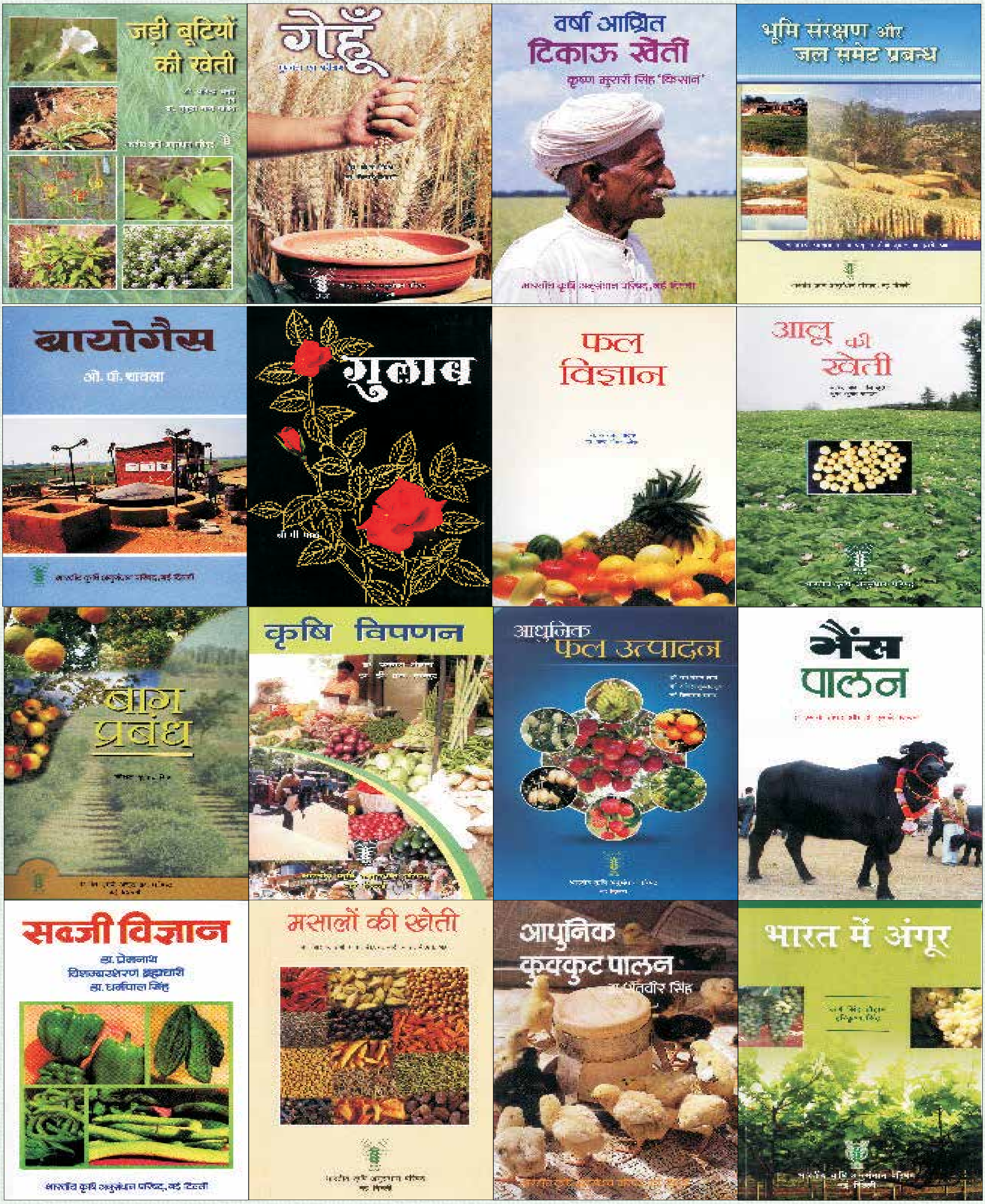

भाकृअनुप
ICAR
संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली -110 012
दूरभाष: 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

अनेक रोगों में गुणकारी है आलूबुखारा

आलूबुखारा एक गूदेदार फल है। यह बहुत गुणकारी है। स्वाद में यह मीठा होता है और इसकी कुछ किस्मों में खटास भी होती है।यह कम वसा तथा उच्च फाइबर से युक्त फल है।

यह विटामिन ए,सी,मैग्नीशियम तथा लौह सामग्री से समृद्ध होता है, तथा इसमें विटामिन डी, बी 6, बी 12, और कैल्शियम की भी भरपूर मात्रा मिलती है। आलूबुखारे के सेवन से ब्लड प्रेशर और कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित किया जा सकता है। अधिकांश लोग यह नही जानते हैं, कि आलूबुखारे द्वारा वजन कम किया जा सकता है। अपने आहार में सूखे आलूबुखारा, इसके जूस तथा स्नैक्स को शामिल करके भूख को नियंत्रित किया जा सकता है। भरपूर मात्रा में विटामिन्स होने के कारण यह हड्डियों को भी मजबूत रखने में मददगार है। आलूबुखारे में फाइटोन्यूट्रिएंट्स होते हैं, जो महिलाओं में ऑस्टियोपोरोसिस को रोकने में सहायक हैं।

यह रक्त का थक्का बनने से रोकता है जिससे ब्लडप्रेशर और हृदय रोगों की आशंका कम होती है। इसके साथ ही यह अल्जाइमर के खतरे को भी कम करता है। इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट्स त्वचा के साथ-साथ दिमाग को भी स्वस्थ रखने में भी सहायता करते हैं तथा तनाव को कम करने में भी अहम् भूमिका निभाते हैं। इसके नियमित इस्तेमाल से पाचन क्रिया ठीक रहती है। इसमें मौजूद बीटा-कैरोटीन से कैंसर का खतरा भी कम होता है।

औषधीय गुणों से भरपूर है गिलोय

गिलोय एक बेलनुमा पौधा है,जो जंगल-झाड़ियों में जल्दी से उग जाता है। इसकी पत्तियां दिखने में पान की तरह और हरे रंग की होती हैं। इसका प्रयोग प्राचीनकाल से ही आयुर्वेदिक औषधि के रूप में किया जा रहा है। जब से डेंगू में गिलोय के सेवन से होने वाले फायदों के बारे में लोगों को पता चला है, तब से अधिकांश लोगों ने अपने घरों में गिलोय की बेल लगानी शुरू कर दी है।

आयुर्वेद के अनुसार गिलोय की केवल पत्तियां ही नहीं, बल्कि इसके जड़ तथा तने में भी औषधीय गुण मौजूद होते हैं। गिलोय में एंटीऑक्सीडेंट, एंटी-इंफ्लेमेटरी और कैंसररोधी आदि जैसे गुण पाए जाते हैं। यह पीलिया, बुखार, अर्थराइटिस, डायबिटीज, कब्ज, एसिडिटी, अपच, मूत्र से संबंधित समस्याओं में काफी फायदेमंद होती है। गिलोय के सेवन से वात, पित्त और कफ तीनों नियंत्रित रखा जा सकता है।

पिछले कुछ दिनों से गिलोय के इस्तेमाल से लीवर खराब होने की भ्रामक खबरें आ रही हैं,जबकि यह पूरी तरह से सुरक्षित है। आयुष मंत्रालय ने इसकी पुष्टि भी की है,उपलब्ध तथ्यों के अनुसार यह टॉक्सिक नहीं है और पूर्णरूप से विश्वसनीय है। किसी भी दवा का प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि इसका उपयोग कैसे किया जा रहा है। किसी दवा में उसकी खुराक की मात्रा सबसे ज्यादा जरुरी होती है, जो उसकी सुरक्षा को निर्धरित करती है।

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती-बाड़ी के आधुनिक तौर-तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा 'कृषि खबरें, देश विदेश की' जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय-समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्य:

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्र:

प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष : 011—25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. एस. के. मल्होत्रा, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स विबा प्रेस प्रा. लि., सी-66/3, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेस-II, नई दिल्ली 110 020 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह